उसे दो तीन बार तक चिल्लाने देना चाहिए; वह अंत में चिल्लाकर थक जायगा और भविष्य में वैसी बातों के लिए बहुत ही कम चिल्लायगा।

इस प्रकार बालक के सब कार्य्य क्रमबद्ध हो जायँगे। नित्य के व्यवहारों और कार्य्यों में क्रम के अभाव के कारण समय नष्ट होता है, किसी प्रकार की उन्नति या वृद्धि नहीं हो सकती, सदा कष्ट होता है और आत्मवशता जाती रहती है। सब बातों के शृङ्खला-बद्ध होने की आवश्यकता इसलिए है कि उसमें आवश्यकताएँ निश्चित और परिमित होती हैं और उनकी सब से उत्तम पूर्त्ति निश्चित उपायों से ही हो सकती है।

यदि आप प्रारम्भिक और उसके बाद की अवस्थाओं में बालकों को इस योग्य बना सकें कि वे सब काम ठीक समय पर और उचित रीति से करें, सदा सज्जनता, शुद्धता और परिश्रम का ध्यान रक्खें, किसी प्रकार के मादक द्रव्य का व्यवहार न करें, अच्छे लोगों का साथ करें, विद्या, प्रकृति, कला, प्रतिष्ठा, आत्म-निर्भरता और सादे जीवन पर अनुराग रक्खें और अनावश्यक बातों से दूर रहें तो आप बहुत सी कठिनाइयों से बच सकते हैं। उन्हें इस बात का अभ्यास डालने की सब से अधिक आवश्यकता है कि वे केवल उचित और विचारपूर्ण कार्य्य करें। इसी से और अभ्यासों के दोष का परिहार हो जायगा।

आपको यह भी स्मरण रखना चाहिए कि हम केवल अनुचित या उचित और बुरी या अच्छी आदतें ही डाल सकते हैं; इन दोनों में से कोई एक परम आवश्यक और उचित है और अच्छी आदत के अभाव में अनुचित या बुरी आदत पड़ना अनिवार्य्य है। ज्यों ज्यों आपके बालक बड़े होते जायँ त्यों त्यों आपको यही आशा रखनी चाहिए कि उनकी अनुचित या बुरी आदतें धीरे धीरे छूटती जायँगी और वे विचार, परिश्रम, योग्यता और प्रेम-पूर्वक उचित कार्य्य करने लग जायँगे।

दूसरी श्रेणी के अभ्यासों को हम सादे जीवन के अंतर्गत रख सकते हैं।

सादा जीवन। (१) भोजन सदा बहुत सादा, पुष्ट और सस्ता होना चाहिए और पाचन-शक्ति के लिए किसी प्रकार हानिकारक न होना चाहिए।

(२) मिठाइयों का व्यवहार बहुत कम, प्रायः भोजन के उपरांत अथवा जलपान के समय होना चाहिए।

(३) बालक का बिछौना सदा ऐसा होना चाहिए जो समय पाकर उसे बहुत कोमल न बना सके।

(४) उसे सदा गोद में रहने या कंधे पर चढ़े फिरने का अभ्यास न पड़ना चाहिए। उसे दूसरों की सहायता का आश्रित न रहना चाहिए और ढाई वर्ष की अवस्था के बाद उसे अपने सब काम प्रायः आप ही करने चाहिएँ। यदि उसपर हरदम बहुत अधिक ध्यान न रक्खा जाय और उसे ऐसे स्थान में छोड़ दिया जाय जहाँ वह अपने माता-पिता को न देख सके तो उसमें आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता आ जायगी।

(५) उसका पहनावा साफ़, सादा, अच्छा और मज़बूत होना चाहिए। बढ़िया कपड़े ख़राब हो जाने के भय से उसका व्यायाम न छुड़ा देना चाहिए।

(६) स्वस्थ रहने, खेलने कूदने, चपलता करने और प्रकृति से संबन्ध रखने में उसे प्रसन्न रहना चाहिए।

(७) बालकों में, विशेषतः उदाहरणों द्वारा, साहस और दृढ़तापूर्वक काम करने का विचार बहुत ही सादे रूप में उत्पन्न कराना चाहिए।

(८) उनकी प्रकृति ऐसी बनानी चाहिए कि जिसमें वे सदा प्रसन्न रहें और बाह्य जगत् के पदार्थों और कार्य्यों से प्रसन्नता की आशा न रखकर उसे स्वयं उत्पन्न कर सकें।

इस श्रेणी की आदतों का संबंध बालक की इच्छापूर्त्ति से है; और यहीं से उसके लिए सादी और

पुष्ट रुचियों का आरंभ होता है। उसे किसी प्रकार का अपव्यय या शौक़ीनी न करने देना चाहिए। इस प्रकार शिक्षा देने से बालक न तो अव्यवस्थित-चित्त होता है और न उसकी आवश्यकताएँ ही अधिक बढ़ने पाती हैं। जिन बातों की उसे वास्तविक आवश्यकता होती है वह उन्हीं की इच्छा रखता और उन्हें ही सम्पादित करता है और अनावश्यक बातों से सदा दूर रहता है।

उपर्युक्त प्रकार के सादे जीवन का विचार प्रधान महत्त्व का है। बहुत से लोगों को सदा सुख चैन से रहने और बढ़िया बढ़िया भोजन आदि करने की ही चिंता रहती है; ऐसे लोगों के विरुद्ध इस पुस्तक के लेखक का मत है कि हमारी शारीरिक आवश्यकताओं और तदनुगत विचारों द्वारा ही हमारे कार्य्य निश्चित होते हैं। इसी लिए हम लोगों को सदा यही जानने की चेष्टा करनी चाहिए कि हमारी वास्तविक आवश्यकताएँ क्या हैं; और उन आवश्यकताओं को छोड़ देना चाहिए जो हमारी वास्तविक आवश्यकताएँ नहीं हैं बल्कि जिनकी उत्पत्ति केवल हमारे अनुमान या ध्यान से ही हुई है।

इच्छा-शक्ति को वश में रखना।

तीसरी श्रेणी के अभ्यासों में इच्छा-शक्ति को अपने वश में रखना है। इस संबन्ध में हमारा उद्देश्य यह है कि बालक अपनी आरम्भिक अवस्था से ही—बालकों की भांति निर्भयता, बुद्धिमत्ता, सुन्दरता, प्रसन्नता, उत्सुकता और शीघ्रता से केवल उचित और युक्तियुक्त कार्य्य करे।

आरंभिक से अंतिम अवस्था तक ऐसे महत्त्वपूर्ण सुकृत्य करने के बहुत अधिक अवसर मिलते हैं। इस संबंध की कुछ आवश्यक आदतों का यहां वर्णन किया जाता है। इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिए कि बालक से कभी कोई युक्तिहीन कार्य्य करने के लिए न कहा जाय नहीं तो हमें किसी प्रकार की सफलता न होगी और उल्टे बालक दुखी या बीमार हो जायगा।

(१) जो कार्य्य करना अभीष्ट न हो उसके संबंध में "मुझे बहुत दुःख है" अथवा इसी प्रकार का और वाक्य कहना चाहिए। ऐसा वाक्य दोहराना न चाहिए, बहुत साधारण अवसरों पर उसका व्यवहार न होना चाहिए और उसपर तुरंत ध्यान दिया जाना चाहिए।

(२) विशिष्ट सूचनाओं का तुरंत पालन होना चाहिए।

(३) बालकों पर कभी बहुत अधिक बिगड़ना या उन्हें मारना पीटना न चाहिए। आज्ञा देने अथवा अप्रसन्नता प्रकट करने के समय आवाज़ ऊँची नहीं बल्कि धीमी होनी चाहिए।

(४) साधारणतः जिस प्रकार नित्य बात चीत करते हैं उसी प्रकार से बालकों को किसी काम के लिए कहना अथवा मना करना चाहिए।

(५) बालकों को कभी किसी काम के लिए किसी प्रकार का पुरस्कार आदि न देना चाहिए और न उन्हें लेना चाहिए। उनके अच्छे कामों से प्रसन्न और बुरे कामों से दुखी हो जाना ही यथेष्ट है। बालकों को जो सम्मति दी जाय उसके अनुसार उन्हें बहुत प्रसन्नता और स्वाभाविक रूप से कार्य्य करना चाहिए।

(६) यदि बालक को किसी अनुचित कार्य्य के लिए एक बार मना किया जाय तो (थोड़ी देर के लिए, अथवा रुग्णावस्था को छोड़ कर) फिर उसके रोने चिल्लाने से कभी उसकी स्वीकृति न देनी चाहिए। इससे बालक को इस बात की शिक्षा मिलती है कि ज्यों ज्यों वे बड़े होते जायँ त्यों त्यों व्यर्थ और अनावश्यक बातों के लिए रोना चिल्लाना छोड़ते जायँ।

(७) बहुत से माता-पिता अकारण ही बहुत देर तक बालकों के प्रश्नों का उत्तर नहीं देते और न उनकी बातों पर कुछ ध्यान देते हैं; इससे बालक अधीर हो जाते हैं। अतः उनकी बातों पर तुरंत ध्यान देना चाहिए और उत्तर के लिए उन्हें बहुत देर तक आसरे में न रखना चाहिए।

(८) जब बालक कोई चीज न लेना चाहे तो उससे कभी यह या इसी प्रकार की और कोई बात न कहनी चाहिए कि "अगर तुम इसे न लोगे तो कोको ले जायगी" या "इसे तुम्हारे भाई को दे देंगे।" आदि।

(९) बालकों से काम कराने के समय कभी उन्हें चिढ़ाना या उनसे किसी प्रकार का हँसी ठट्ठा आदि न करना चाहिए।

(१०) यदि बालक कोई चीज माँगता हो तो उसे बहका कर या और कोई चीज दिखला कर उसका ध्यान कभी दूसरी तरफ़ न फेरना चाहिए। हाँ, बहुत छोटेपन में, प्रायः डेढ़ वर्ष की अवस्था तक, बीमारी में, अथवा ऐसे अवसर पर जब कि बालक भी अपना ध्यान बँटाना चाहता हो इस प्रकार बहकाना अनुचित नहीं है।

ऊपर जो बातें कही गई हैं, किसी बुद्धिमान या दृढ़ माता-पिता को कभी उनके विरुद्ध चलने की कोई आवश्यकता न होगी। जो कार्य्य बड़े बड़े कठोर उपायों से सम्पन्न नहीं हो सकते वे विचार और दृढ़ता की सहायता से बहुत सहज में सम्पन्न हो जाते हैं। किसी दुष्ट बालक को बहुत अधिक मारने पीटने से भी जो फल नहीं होता वह किसी अच्छे बालक को अप्रसन्नतासूचक दृष्टि से देखने या कोई साधारण निराशायुक्त बात कहने से ही हो जाता है।

नियमित उत्तम अभ्यासों, सादे जीवन और भली भाँति वश में की हुई इच्छा-शक्ति से माता-पिता और बालक दोनों का कार्य्य बहुत हलका हो जाता है।

चौदह नैतिक अभ्यास।

आरंभिक अवस्था के लिए चौथी और अंतिम श्रेणी के जिन अभ्यासों की आवश्यकता होती है वह नीति से संबंध रखते हैं। इस अवस्था में उनकी संख्या अपेक्षाकृत थोड़ी ही है। वे अभ्यास इस प्रकार हैं—

(१) बालक की आकृति, कपड़े या और किसी चीज की अनावश्यक प्रशंसा करके उसे कभी बिगाड़ना न चाहिए।

(२) बालक को कभी ऐसा कहने या सुनने का अवसर न देना चाहिए कि "यह चीज हमारी है" और "यह तुम्हारी है"। उसे सदा यही समझाना चाहिए कि सब चीजें सब की हैं। पर साथ ही उसके निजत्व भाव को समूल नष्ट भी न करना चाहिए; क्योंकि उससे अनेक लाभ भी होते हैं।

(३) बालक को और लोगों के साथ सब बातों में प्रसन्नतापूर्वक सम्मिलित होना चाहिए।

(४) बालक को नम्र और सुशील होना चाहिए। किसी बात के लिए प्रार्थना करने के समय 'कृपया' आदि शब्दों का व्यवहार करना चाहिए और उस कार्य्य के हो जाने पर करनेवाले को धन्यवाद देना चाहिए।

(५) दो बरस से बड़े बालक को छोटे छोटे कार्य्यों में सहायक होना चाहिए और अपना कार्य्य प्रायः स्वयं ही कर लेना चाहिए।

(६) छोटे छोटे कष्टों को उसे साहसपूर्वक सहना चाहिए और उनपर बहुत कम ध्यान देना चाहिए। जिस स्थान पर बालक गिर पड़ता है बहुत से लोग उस स्थान को मारने लगते हैं और बालक के जिस अंग पर चोट लगती है उसे फूँकने या चूमने लगते हैं। यद्यपि इसमें बहुत अधिक हानि नहीं है पर तो भी यह बात ठीक नहीं है। ऐसे अवसरों पर यह कहना बहुत उपयुक्त और लाभदायक होता है कि—"जाने दो, कुछ परवा नहीं"। उन्हें डरपोक बनाने की अपेक्षा साहसी बनाने का उद्योग होना चाहिए।

(७) प्रायः बालक जब किसी को मारते या चिकोटी काटते हैं तो और लोग देख कर बहुत प्रसन्न होते और उस काम के लिए बालक की प्रशंसा करते हैं। यह बात बहुत अनुचित है और इसे तुरंत रोकना चाहिए।

(८) बालक को इस बात के लिए उत्तेजित करना चाहिए कि उसकी दृष्टि विशद, स्वर मनोहर और विचार दृढ़ हों।

(९) प्रथम अवस्था की समाप्ति पर जहाँ तक संभव हो बालक को उचित कार्य्य करना और उसी पर प्रेम रखना चाहिए।

(१०) बालक में सुशीलता, सद्गुण और सुविचार उत्पन्न करने के लिए कोई पालतू छोटा जानवर उसके सपुर्द कर देना चाहिए। जिस समय बिल्ली, कुत्ते आदि थक या खिजला जायँ, गुर्राने, भौंकने या दुम फटकारने लगें, अथवा हाथ से छूट कर भागने की चेष्टा करें उस समय उन्हें छोड़ देना चाहिए। गुड्डा, गुड़िया और इसी प्रकार की दूसरी चीज़ों के व्यवहार और खेल आदि से बालक सचेष्ट हो जाते हैं। साथ ही उनके लिए अपने भाइयों, बहनों और बड़ों को गृहस्थी के तथा दूसरे कामों में यथाशक्ति सहायता देना सर्वोत्तम है। छोटे छोटे पौधों की रक्षा का काम बालकों के सपुर्द करने से भी उन्हें बहुत कुछ शिक्षा मिलती है। यह बात भी स्मरण रखनी चाहिए कि बिलकुल न खेलने और सदा काम में लगे रहने से चतुर बालक भी बोदे हो जाते हैं।

(११) कोई विषय या कार्य्य कभी अधूरा न छूटना चाहिए।

(१२) हर एक काम खूब ही जी लगा कर, बहुत होशियारी और समझदारी से होना चाहिए।

(१३) बालक को सदा खूब प्रसन्न रहने और छोटे छोटे कष्टों पर ध्यान न देने की शिक्षा मिलनी चाहिए। उसे वीरता और साहस-प्रिय होना चाहिए।

(१४) सभी छोटे बड़े कामों और जीवमात्र के संबंध में बालक को औचित्य का बहुत व्यापी ध्यान रखना चाहिए।

साधारणतः सभी प्रकार के अभ्यासों में निश्चित अवसरों पर विशेष कठिनाइयाँ हुआ करती हैं। एक तो दो वर्ष की अवस्था में जब कि बालक को कुछ ज्ञान होने लगता है। दूसरे, चार पाँच वर्ष की अवस्था में जब कि बालक में भाषण और इच्छा-शक्ति बढ़ती है। तीसरे, दस वर्ष की अवस्था में जब से बालक स्वयं कोई कार्य्य करने के योग्य हो जाता है। और चौथे जब युवावस्था की समाप्ति होती है और वह वयस्क हो जाता है। पहली, दूसरी और तीसरी अवस्थाओं में बालक को उत्तम अभ्यास डालने के लिए धैर्य्य की आवश्यकता होती है क्योंकि उस समय केवल अस्थायी अवसर को पार करने का प्रश्न होता है। जिस समय बालक एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने लगे उस समय उसपर किसी बात के लिए बहुत अधिक जोर न देना चाहिए और कभी कभी यह भी समझ लेना चाहिए कि इसमें भूल बालक की नहीं बल्कि हमारी ही है। हमें कुछ अंशों में समय पर भी भरोसा रखना चाहिए। उस समय हमें केवल बुद्धिमत्ता से काम लेना चाहिए और इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि पुराने व्यवहारों के स्थान में नए प्रकार के व्यवहारों को कहाँ तक परिवर्त्तित करना उचित है।

ऊपर कहे हुए नियम आदि सभी साधारण बालकों के लिए समान रूप से प्रयुक्त हो सकते हैं; एक दम असाधारण बालकों के लिए नहीं। यदि आपका बालक दुर्बल हो तो उसकी अधिक रक्षा होनी चाहिए; यदि उसकी शक्तियों में और किसी प्रकार का विकार हो तो उसे उत्तेजक या भयानक बातों से बचाना चाहिए।

अगर बालक को ऊपर लिखे हुए चारों श्रेणियों के अभ्यास पूर्ण रूप से पड़ जायँ तो वह सदा स्वस्थ, प्रसन्न और चपल रहेगा, उसकी वासनाएं साधारण और सादी होंगी, उसे बहुत सी अच्छी अच्छी बातों की आदत पड़ जायगी और उसके अवस्थानुसार उसका नैतिक आचरण बहुत पुष्ट होता जायगा।

ज्ञान-वृद्धि।

प्रारंभिक अवस्था में बालक की ज्ञान-वृद्धि के लिए कोई यथेष्ट प्रबंध नहीं हो सकता। तो भी सन्दूक, कलम, कमीज़, फूल, तोता, बिल्ली तथा गृहस्थी के अन्य ऐसे पदार्थ जो बालकों को रुचते हों, उन्हें भली भाँति दिखलाने चाहिएं और उनके विषय में मुख्य मुख्य रोचक बातें उन्हें सुनना चाहिए।

झूठ मूठ कोई चीज़ खाने पीने या पकड़ने के बहाने से उनकी अनुमान और विचार-शक्ति की वृद्धि हो सकती है।

समय समय पर हाल की और बीती हुई बातों का ध्यान दिलाते रहने से उनकी स्मरण-शक्ति तीव्र हो सकती है।

चलने फिरने और घूमने के समय सूर्यास्त और फूलों आदि पर विचार करने से उनमें सोचने की शक्ति बढ़ती है।

यदि बालक अपने संबंध की किसी बात या परिस्थिति को एक एक करके अपने भाइयों, बहनों या और संबंधियों पर घटावे अथवा एक थाली या कटोरे का घर की बाकी थालियों या कटोरों से मिलान करे तो उसमें साधारणतः सम-विभाग करने की शक्ति आ जाती है।

मुख्य तात्पर्य्य यह कि प्रारम्भिक अवस्था में उसे जो कुछ मानसिक शिक्षा दी जायगी वह बड़े होने पर उसके लिए बहुत काम की होगी।

—:o:—

ढ़ाई से सात वर्ष तक की अवस्था।

बालक की उठान।

आपको सदा इस बात पर दृष्टि रखनी चाहिए कि आपके बालकों में नित्य और शीघ्रतापूर्वक परिवर्त्तन हो रहा है। वयस्क मनुष्यों में भी बराबर परिवर्त्तन हुआ करता है; पर वह परिवर्त्तन न तो इतनी शीघ्रता से होता है और न इतनी अधिकता से। इसलिए बालक के विषय में आपको सदा यही समझना चाहिए कि वह खूब बढ़ता और परिवर्त्तित होता रहता है। बराबर थोड़े थोड़े दिनों में बालक की बदलती हुई प्रकृति के अनुकूल, उसके साथ व्यवहार होना चाहिए। कभी कभी तो एक ही सप्ताह में उसमें बहुत बड़ा परिवर्त्तन दिखलाई देगा। यदि आप यह तत्त्व भूल जायँगे तो आप उन्हें अनेक कार्य्यों से रोकेंगे, जिनसे रोकना केवल कुछ सप्ताह पहले ही युक्ति-युक्त था। उस दशा में जिस भूमि पर वे बढ़ रहे हैं, उसकी एक एक अंगुल के लिए उन्हें आपके साथ झगड़ना पड़ेगा। और आप केवल उसी दशा में उनकी आवश्यकता पूरी करेंगे जब कि आप उनका विरोध करने में असमर्थ हो जायँगे। पर यदि आप बुद्धिमान् होंगे तो साथ ही साथ आप भी बालक के परिवर्त्तन के अनुकूल ही होते जायँगे और उसके साथ कोई ऐसा व्यवहार न करेंगे जो उसकी उठान में बाधक हो।

उस अवसर पर हमें यही समझना चाहिए कि बालक दिन पर दिन बढ़ता हुआ बोलना चालना और स्वतंत्रता-पूर्वक घूमना फिरना सीख रहा है और उसे अनेक नई बातों का ज्ञान हो रहा है।

दूसरी अवस्था में बालक की स्थिति।

(१) बालक में सबसे मुख्य, बोलने की शक्ति बढ़ती है। ढाई वर्ष की अवस्था में बालक केवल थोड़े से टूटे फूटे वाक्य बोल सकता है। पर सात वर्ष की अवस्था में वह साधारणतः अच्छी तरह बात चीत कर सकता है। प्रसिद्ध विद्वान् रस्किन ने इसी अवस्था में एक छोटा मोटा काव्य रचा था।

(२) बालक की शारीरिक वृद्धि होती है। वह खूब अच्छी तरह चल फिर और दौड़ सकता है और अनेक कठिन कार्य्य कर सकता है।

(३) उसमें समझदारी आ जाती है और वह संग साथ ढूँढने लगता है। दूसरे मनुष्यों और पदार्थों के

विषय में वह अपनी सम्मति स्थिर करता है और कई मित्र और साथी बना लेता है।

(४) बालक प्रत्येक पदार्थ का वास्तविक स्वरूप, कारण और रचना-प्रणाली आदि जानने के लिए उत्सुक रहता है।

(५) पशुओं और चित्रों आदि को देख कर वह बहुत प्रसन्न होता है।

(६) वह कार्य्य करने का प्रयत्न करता है। यह परीक्षार्थ कार्य्य वह कभी कभी स्वेच्छा से ही करता है। वह दूसरों को जो कार्य्य करते देखता है उसके अनुभव और स्मृति से ही वह स्वयं नए कार्य्य करता है।

(७) उसे सब बातों का, विशेषतः देखी हुई बातों का, खूब ध्यान रहता है। प्रायः सुनी हुई बातों और कार्य्यों का उसे पूरा स्मरण रहता है।

आज्ञाकारिता।

पहले वर्ष में बालक से कुछ कहने की आवश्यकता नहीं होती। इसके उपरांत उससे कोमल और छोटी छोटी बातें कहनी चाहिए। किसी अनुचित कार्य्य करने के समय उनसे "नाः" "चुप रहो" "बैठो" आदि ही कहना चाहिए। उस अवस्था में उसमें आपही आप तुरंत आज्ञापालन करने की प्रवृत्ति होती है।

बालक के बड़े होने पर यह प्रश्न कठिन हो जाता है। उस समय वह जिस प्रकार औरों को मिलते जुलते और बात चीत करते देखता है उसी प्रकार स्वयं भी करता है। साधारण खेल या बात चीत के संबंध में सदा उससे भी पूछ लेना चाहिए और यथा-सम्भव उसकी सम्मति का आदर करना चाहिए। आज्ञाकारिता का अर्थ, बालक से ऐसे काम के लिए कहना है जिससे हम उसको सहमत कराया चाहते हैं; और आदर्श दशाओं में बालक तथा माता-पिता में यही संबंध होता है।

ज्यों ज्यों बालक बड़ा होता है त्यों त्यों आज्ञाकारिता के प्रश्न में भी परिवर्त्तन होता जाता है। पहले वह तुरंत आज्ञा मानता है; तदुपरांत वह अप्रिय आज्ञाओं को जोर और दबाव डालने पर मानता है। और अंत में आपका अच्छी शिक्षा पाया हुआ बालक बहुत शीघ्र और स्वच्छन्दता-पूर्वक आपका कहना मानता है। आज्ञाकारिता के अवसर पर उसे भयभीत न कर देना चाहिए; विशेषतः इसलिए कि कभी कभी बुद्धिमान् माता-पिता को भी तुरंत और नम्रतापूर्वक बालकों की बात मानने की आवश्यकता हुआ करती है। इस बात को भूल न जाना चाहिए कि बालक उसी समय सहज में आज्ञाकारी बनाए जा सकते हैं जबकि उनकी उचित आवश्यकताओं पर पूरा पूरा ध्यान दिया जाय।

यदि मनुष्य की बढ़ती हुई शक्तियों को अच्छे कामों की ओर न लगाया जाय तो बहुत संभव है कि वे अनुचित मार्ग में लग जायँ। मान लीजिए कि एक लड़की अपने पिता को कोई काम करते हुए देख कर स्वयं उसके विरुद्ध करती अथवा उसे रोक कर स्वयं वह काम करना चाहती है, जो कुछ उससे कहा जाता है सदा उससे विपरीत चलती है और प्रत्येक बात का कारण और उस कारण का भी कारण पूछती है। साधारणतः ऐसी प्रकृति हानिकारक नहीं होती; बल्कि उसे बहुत शुभ लक्षण समझना चाहिए। पर हाँ, यदि उसपर बिलकुल ध्यान न दिया जाय अथवा माता-पिता बुरी तरह उसका विरोध करें तो उसकी यह विपरीत और आज्ञा भंग करने की प्रकृति बहुत बढ़ और दृढ़ हो जायगी। बहुत अधिक रुकावट से उसमें और भी उत्तेजना मिलती है और प्रकृति में कोई विशेष उत्तम परिवर्त्तन नहीं हो सकता। इसका आरंभ तो अज्ञानता और विनोद से होता है पर अंत में वह दोष और विपत्तिजनक हो जाता है।

जब बालक में इस प्रकार की अनुचित प्रकृति के लक्षण दिखलाई दें तो यथासंभव उसे व्यर्थ और अनावश्यक समझ कर अधिक महत्त्व न देना चाहिए, बिना उसपर विशेष ध्यान दिए उसे चुपचाप रोकना चाहिए और उसके बदले में उसका

ध्यान दूसरे प्रकार के कार्य्यों की ग्रोर फेर देना चाहिए। इस प्रकार थोड़े ही समय में उसका वह दोष दूर हो जायगा। इस स्थान पर यह बात मालूम होती है कि दोष आरंभ में बहुत ही छोटे ग्रैार तुच्छ होते हैं ग्रैार उन्हें दूर करने में कठोरता की अपेक्षा बुद्धिमत्ता से कार्य्य लेना चाहिए।

सत्यनिष्ठा का बीजारोपण।

बालक ज्यों ज्यों बड़े होते जायँ त्यों त्यों उनकी इच्छा ग्रैार रुचि उत्तम अभ्यासों की ग्रोर बढ़ती जानी चाहिए ग्रैार बुरे ग्रैार निंदनीय अभ्यासों से उन्हें घृणा होनी चाहिए।

(१) "इच्छा-शक्ति" वाले प्रकरण के आरंभ में बालकों के लिए जो बातें बतलाई गई हैं उनकी ग्रोर उन्हें बहुत अधिक ध्यान देना चाहिए।

(२) अपने तथा दूसरों के लिए वे यथासाध्य जो कुछ कर सकें, उसके लिए उन्हें सदा प्रयत्न-शील रहना चाहिए। उदाहरणार्थ उन्हें केवल इसी लिए साफ़ सुथरा न रहना चाहिए कि उन्हें इसका अभ्यास डाला गया है; बल्कि उन्हें स्वभावतः ही स्वच्छता-प्रिय होना चाहिए।

(३) साधारण कष्टों ग्रैार कठिनाइयों को उन्हें वीरतापूर्वक सहन करना चाहिए।

(४) उन्हें अधिक सुस्वादु पदार्थों से सदा दूर रहना ग्रैार सादा भोजन पसंद करना चाहिए।

(५) उन्हें अधिक रात बीते तक जागना न चाहिए ग्रैार तड़के सोकर उठना चाहिए।

(६) भोजन आदि के समय उन्हें सब लोगों के साथ बहुत भलमनसत ग्रैार लियाकत से बैठना चाहिए।

(७) उन्हें चपल ग्रैार प्रसन्नचित्त रहना चाहिए।

(८) माता-पिता तथा अन्य संबन्धियों को उचित है कि जो बालक इस प्रकार के उत्तम व्यवहार करें उन्हीं को वे अपना प्रेम-पात्र बनावें ग्रैार शेष बालकों के साथ इसके विरुद्ध आचरण करें।

बालक में सत्य-निष्ठा उत्पन्न होने से पहले उसमें उत्तम अभ्यासों का होना परम आवश्यक है; क्योंकि आपके बालक जिन बातों से परिचित होंगे उन्हें तो तुरंत आदरपूर्वक करेंगे ग्रैार जो बात उनके लिए नवीन होगी उससे वे दूर रहेंगे।

यदि माता-पिता समझदार न हों ग्रैार उनके सब कार्य्य क्रमविहीन हों, पर सौभाग्यवश उनके बालकों का स्वभाव इससे बिलकुल विपरीत हो, तो उस समय यही होगा कि बालक तो अपनी इच्छा से सब कार्य्य उत्तमतापूर्वक करेंगे पर परि-स्थिति के कारण उन्हें भी उन्हीं पुराने अभ्यासों की ग्रोर प्रवृत्त होना पड़ेगा। उनकी कोमल प्रकृति शीघ्र बिगड़ जायगी, उनके विचार पुराने ढर्रे के हो जायँगे ग्रैार वे अपने सारे प्रयत्न भूल जायँगे। वे उपस्थित अभ्यासों के ही वशीभूत रहेंगे ग्रैार बिना किसी प्रकार की आपत्ति के उन्हीं का पालन करेंगे। इसमें संदेह नहीं कि ऐसी दशा में बालक अपने आपको "पाजी" समझने के लिए विवश किए जाते हैं, पर सत्यनिष्ठा के बदले इस प्रकार के तर्कनापूर्ण विश्वास पूरा पूरा काम नहीं दे सकते।

अतः चाहे आप अपने बालक को सत्य की ग्रोर प्रवृत्त करने के लिए कितने ही उत्सुक क्यों न हों ग्रैार केवल उत्तम अभ्यासों की अल्प उपयोगिता पर आपका कितना ही दृढ़ विश्वास क्यों न हो पर जब तक आप उन्हें उत्तम अभ्यास डाल कर उनका मार्ग न साफ़ कर दें तब तक आपको उनके सत्य-निष्ठ होने की आशा न करनी चाहिए। जब उनमें एक भी बुरा अभ्यास न रह जाय तभी उनके सज्जन होने की इच्छा फलवती हो सकती है ग्रैार तभी आप उनके सत्यनिष्ठ होने की आशा कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त इस बात के लिए आपको सदा यह भी ध्यान रखना चाहिए कि आपके बालकों में उद्दंड होने की इच्छा कभी न हो। यदि बीच में वे कभी कभी किसी प्रकार का उत्पात कर बैठें तो कोई चिन्ता की बात नहीं है। हमें सदा इसी बात का प्रयत्न करना चाहिए कि उनमें बुरी बातों का

अभ्यास न बढ़े। यदि बालक या माता-पिता से कभी कोई भूल हो जाय तो उससे अधिक हानि संभावित नहीं।

सचाई।

दूसरी अवस्था में कदाचित् सब से बड़ी कठिनाई आपको बालक के झूठ बोलने से होगी।

इससे पूर्व बालक में झूठ बोलने की यथेष्ट शक्ति नहीं थी; पर इस दशा में पहुँच कर वह बात जाती रहती है। अब उसमें झूठ बोलने की सामर्थ्य हो जाती है। आरंभ में उसका झूठ बोलना प्रायः स्वाभाविक ही होता है क्योंकि उस अवस्था में वह केवल वही बातें कहता है जो उसके ध्यान में आती हैं। यदि आप उससे पूछें—"यह चीज़ तुम्हें किसने दी?" तो वह घर के किसी न किसी आदमी का नाम जो उसके मन में आवेगा अवश्य बता देगा और उसका यही उत्तर बहुत से अंशों में ठीक भी है।

बहुत से माता-पिता इसी प्रकार की उलटी और झूठी बातें सुनकर बहुत प्रसन्न होते हैं और केवल ऐसे उत्तर सुनने के लिए ही उनसे उलटे सीधे प्रश्न भी करते हैं। यह बात बहुत बुरी है। बालक की इच्छा होती है कि वह बात चीत करना सीखे और इसी लिए भाषण का उद्देश्य और अभिप्राय न जान कर भी वह कुछ न कुछ बोला ही करता है और इस प्रकार उसे आप ही आप झूठ बोलने की आदत पड़ जाती है।

जब बालक कोई अनुचित बात करता और उस पर रोका जाता है तो वह ऊटपटाँग उत्तर देता है और आगे चलकर विशेषतः ऐसे अवसर पर जब कि उसे अपने साथ कोई कठोर व्यवहार किए जाने की संभावना प्रतीत होती है तो वह झूठ बोलने में ही अपनी कुशल समझता है और इस प्रकार उसे धीरे धीरे झूठ बोलने का अभ्यास पड़ जाता है। यदि उससे पूछा जाय कि "यह काम किसने किया?" तो वह तुरंत तोते की भाँति कह देगा कि "भइया ने।" इसलिए ऐसे अवसरों पर ख़ूब सचेष्ट रहने की आवश्यकता होती है।

यदि बालक कायदे से रहे, उसकी रुचि साधारण हो, वह आज्ञाकारी हो और दूसरों की सहायता के लिए सदा तत्पर रहे तो उसे झूठ बोलने का बहुत ही कम अवसर मिलेगा। उसे झूठ बोलने से बचाने के लिए आपको निम्न-लिखित उपाय करने चाहिएँ,—

(क) उनकी भूलों को प्रसन्न होकर सुधारते रहना।

(ख) उनसे कभी सन्दिग्ध प्रश्न न करना।

(ग) यदि वह बिना समझे बूझे आप ही आप कुछ कह बैठे तो उसपर ध्यान न देना।

(घ) कभी झूठ न बोलना और न झूठ का ज़िक्र करना।

यदि बालक कभी कोई साधारण अनुचित कार्य्य करे तो कोमलता और प्रसन्नतापूर्वक उससे यही कहना चाहिए—"तुम भूल कर रहे हो।" "आगे से ध्यान रखना, या ऐसा काम न करना।" यदि आप सब कार्य्य विचारपूर्वक करेंगे तो आपके बालक सदा सचाई का व्यवहार करेंगे। ऐसी बातों से बचाने के लिए आपको उसी समय तक अधिक सचेष्ट रहना चाहिए जब तक कि वे पाँच बरस के न हो जायँ। जब एक बार उन्हें सच बोलने का अभ्यास पड़ जायगा तो फिर वे सदा सचाई का व्यवहार करेंगे।

व्यवस्था और समदर्शिता।

(क) जिन बालकों की आरंभ से ही इस प्रकार शिक्षा होगी वे यथासाध्य अपने कार्य्य आप ही कर लेंगे। उन्हें यह जानना चाहिए कि हर एक चीज़ कहाँ रखनी चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर कोई चीज़ कहाँ से लेनी चाहिए। खिलौने, किताबें और अपनी दूसरी आवश्यक चीज़ें उन्हें उपयुक्त स्थानों पर रखनी चाहिएँ और काम पड़ने पर वहीं से उठानी और काम करके फिर वहीं रख देनी चाहिएँ। उनका

टहलना, बात करना, कपड़े पहनना, खाना, उत्तर देना, प्रश्न करना, खेलना, काम करना ग्रैार व्यायाम करना ग्रादि सभी बातें उचित रीति से होनी चाहिएं। जहाँ तक हो सके बालकों को यह सब काम स्वभावतः बुद्धिमत्ता ग्रैार प्रसन्न चित्त से इच्छापूर्वक ग्रैार समाप्ति तक धैर्य्य के साथ करने चाहिएँ। उन्हें कभी मैला कुचैला ग्रैार गंदा न रहना चाहिए ग्रैार न कड़ाई या रुखाई का कोई व्यवहार करना चाहिए। उन्हें सब चीज़ों का उचित ग्रैार विचारपूर्वक उपयोग करना चाहिए। इस प्रकार बालक के हृदय में प्रत्येक वस्तु के लिए ग्रादर ग्रैार ग्रनुराग उत्पन्न होता है; ग्रैार यह एक ऐसा गुण है जो प्रायः सभी वीर ग्रैार सशक्त स्त्रियों ग्रैार पुरुषों में हो सकता ग्रैार होता है।

(ख) जो लोग प्रसन्नचित्त रहते हैं उनका ग्राचरण भी उत्तम ग्रैार शुद्ध रहता है। जब बालक प्रत्येक वस्तु के साथ उत्तम व्यवहार करने लग जायँगे तो प्रत्येक मनुष्य के साथ भी उन्हें न्याय ग्रैार दयापूर्ण व्यवहार करने का ग्रभ्यास पड़ जायगा। सब लोगों के साथ समान ग्रैार उचित व्यवहार करने का गुण बहुत ही सादा, उपयोगी ग्रैार लाभदायक है।

यदि राजनीति, शिक्षा, क़ानून या व्यवहार की बातों में भिन्न जाति, वर्ण या सम्प्रदाय के लोगों के साथ हम किसी प्रकार का भेद-भाव रक्खेंगे तो बालकों के लिए हमारी नीति समझना बहुत कठिन हो जायगा ग्रैार वे भ्रम में पड़ जायँगे।

साधारण व्यवहार।

बालकों की पहली ग्रवस्था केवल ग्रभ्यास की है ग्रैार दूसरी ग्रवस्था ग्रभ्यास ग्रैार ग्राज्ञाकारिता की। इस लिए जो बातें पहली ग्रवस्था के लिए बतलाई गई हैं वही दूसरी ग्रवस्था में भी प्रयुक्त होनी चाहिएं।

(क) स्वच्छता, उत्तम रीति से बोलने चालने, भोजन करने ग्रैार कपड़ा पहनने, सब चीजों को उपयुक्त स्थानों पर रखने, वचन पूरा करने तथा इसी प्रकार की ग्रैार सब बातों में ग्रापको सदा व्यवस्था को उत्तेजना देनी चाहिए।

(ख) ग्रापके बालकों को शौकीनी से दूर रह कर सदा सादा जीवन व्यतीत करना चाहिए, ग्रपव्यय से बचना चाहिए ग्रैार सब काम परिश्रम-पूर्वक करना चाहिए।

(ग) बालकों को स्वयं ही भोजन करना ग्रैार कपड़ा पहनना चाहिए ग्रैार इस तरह के ग्रैार कामों में दूसरों से सहायता न लेनी चाहिए; इस प्रकार वे ग्रपनी बड़ी बड़ी ग्रावश्यकताग्रों को थोड़े ही में पूरा कर लेंगे ग्रैार ग्रपनी इच्छाग्रों को वश में रखना सीखेंगे।

(घ) मुख्यतः ग्रापको उचित है कि संसार के सब जीवों के साथ हार्दिक सहानुभूति ग्रैार ग्रनुराग रखकर नैतिक गुणों की वृद्धि करें।

इस प्रकार बहुत सरलता से ग्राप सत्यनिष्ठा पर जोर दे सकेंगे ग्रैार उत्तमोत्तम ग्रभ्यासों की सृष्टि कर सकेंगे।

तथापि इसमें भी कई कठिनाइयाँ हैं। जो बालक ग्राज्ञा पालन नहीं करते उनके ग्रैार भी ग्रनेक ग्रच्छे ग्रभ्यास छूट जाते हैं ग्रैार ग्रागे चलकर उन्हें नए ग्रभ्यास डालना बहुत ही कठिन हो जाता है। दोनों दशाग्रों में ग्रापको इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ग्रादतें एक दम से डाली या छुड़ाई नहीं जा सकतीं। उक्त ग्रवसरों पर या उस ग्रवस्था में जब कि बालक को कही या समझाई हुई बातें स्मरण न रहती हों तो ग्रापको उचित है कि ग्राप उनके कान में समझाकर कहें, उन्हें सुनाकर किसी दूसरे से कहें, उनसे पूछें कि कोई तुम्हारे विषय में क्या समझे या कहेगा ग्रथवा इसी प्रकार के ग्रैार ग्रप्रत्यक्ष उपाय करें। इससे बालकों को सब बातों का सदा ध्यान रहेगा; ग्रैार उचित विचारणीय प्रश्न ग्रा पड़ने पर वे भी ग्रापकी भांति गंभीर होकर उसे सोचने लगेंगे।

इस दूसरी अवस्था में यह बात बहुत आवश्यक है कि बालकों को इतने अच्छे कामों में लगा दिया जाय कि जिनमें उनका सारा समय व्यतीत हो। साधारणतः कपड़े पहनने और उतारने, नहाने धोने, भोजन करने, खेलने कूदने, घूमने फिरने और सोने में ही बहुत सा समय निकल जाता है। पर इन कामों से जो समय बच रहता है, सुशिक्षित बालकों के लिए वही बहुत अधिक है।

काम।

आपके बालक जब घर में रहें तो उनके खेलने और रहने के लिए अच्छे कमरों की आवश्यकता है। उस कमरे में सब चीजें इस प्रकार सजाकर रखनी चाहिए कि बालक उन्हें तोड़ फोड़ या और किसी प्रकार बिगाड़ न सकें। यदि उनके लिए किसी अलग खाली कमरे का प्रबंध न हो सके तो किसी कमरे का मध्य भाग उनके लिए बिलकुल खाली कर दिया जाय और उनके खेलने के लिए कुछ ऐसी चीजें वहाँ रख दी जायँ जिनके टूटने फूटने से कोई हानि न हो। विशेषतः ऐसी ऋतुओं में जब कि लड़कों के लिए बाहर निकलना कष्ट-प्रद हो, यह प्रबंध बहुत ही आवश्यक है।

बच्चों के लिए कुछ ऐसी बातों का प्रबंध कर देना चाहिए जिनमें उनका सारा समय लगा रहे।

(१) कुछ ऐसे खेल जिनमें प्रायः सभी योग दे सकें।

(२) अनेक प्रकार के व्यायाम आदि।

(३) किस्से कहानियों आदि में भी कुछ समय बिताना चाहिए।

(४) मट्टी के खिलौने आदि बनाना।

(५) अक्षरों का पहचानना और बहुत साधारण गणित।

(६) एक साधारण गुड़िया, लकड़ी और मट्टी के दो चार खिलौने।

(७) ऐसे साधारण खेल जिनमें बालक आपस में राजा, सिपाही, दूकानदार, शिक्षक, शिष्य और कारीगर आदि बनें।

(८) घर में आनेवाले लोगों से मिलना जुलना और उनके साथ बातें करना।

इसके अतिरिक्त उनके लिए कुछ ऐसे साधनों की भी आवश्यकता है जिनसे उनका ज्ञान बढ़े।

(१) एक नक्शा संसार का, एक एशिया का और एक भारतवर्ष का दीवार पर टँगा रहना चाहिए; कुछ पुस्तकें और पशुओं, पक्षियों तथा वृक्षों के रंगीन चित्र होने चाहिएं। कुछ ऐसे चित्र भी हों जिनमें मनुष्य की ठठरी, अन्य अवयव और पृथिवी के भीतरी भाग के दृश्य हों। तख्ती, खड़िया, काग़ज़ और पेन्सिल आदि भी आवश्यक हैं।

(२) एक छोटी दूरबीन, एक सूक्ष्मदर्शक यंत्र, एक चकमक, एक गोल (ग्लोब) और सारे जगत का चित्र भी होना चाहिए।

(३) बरस में एक बार यदि सम्भव हो तो किसी चिड़ियाखाने, अजायबखाने या गांव देहात में जाना चाहिए।

(४) कभी कभी किसी छापेखाने, पुतलीघर या और बड़े बड़े कारखानों में भी जाना चाहिए।

(५) जब बालक पाँच बरस के हो जायँ तो उन्हें साधारण पढ़ने, लिखने, हिसाब करने, चित्र आदि बनाने और सीने पिरोने आदि की भी नियमानुसार साधारण शिक्षा दी जानी चाहिए।

बालकों के लिए कुछ काम निश्चित कर देना बहुत ही उपयोगी होता है। इससे वे बहुत शांतिपूर्वक रहते हैं, उनका समय ठीक तरह से बीतता है और वे किसी प्रकार का पाजीपन नहीं कर सकते। वे पढ़ने लिखने और कारबार करने के योग्य हो जाते हैं और उनमें सब प्रकार के सद्गुण आ जाते हैं।

जिस प्रकार वयस्क मनुष्यों के लिए व्यवस्थित कार्य्य आवश्यक और उपयोगी होता है उसी प्रकार

बालकों के लिए व्यवस्थित खेल भी आवश्यक और उपयोगी है। बड़ों की भांति छोटों को भी अपना मन, बुद्धि और शरीर किसी न किसी काम में पूरी तरह लगाए रखने की आवश्यकता होती है।

जिस प्रकार यह सत्य है कि किसी मनुष्य के लिए सदा अकेले रहना अच्छा नहीं है उसी प्रकार यह भी सत्य है कि प्रत्येक मनुष्य के लिए थोड़ी देर तक एकांतमें शांतिपूर्वक रहना बहुत अच्छा है। इसलिए आपके बालकों को थोड़ी देर के लिए शांति से रहना भी बहुत आवश्यक है। जब वह खेलते खेलते थक जायँ तो उन्हें कुछ देर के लिए किसी कमरे में आराम भी करना चाहिए। इन सब कार्य्यों में बालकों को पूरी स्वच्छन्दता मिलना आवश्यक है।

कार्य्यों में सहायता।

ज्यों ही बालक ढाई तीन बरस के हों त्यों ही उन्हें यह समझाने का प्रयत्न आरंभ कर देना चाहिए कि गृहस्थी और उसके कामों में प्रत्येक मनुष्य को भाग लेना आवश्यक है। अर्थात् बालकों को भी घर के कामों में यथासाध्य उतनी ही सहायता देनी चाहिए जितनी बड़े देते हैं।

जिस प्रकार माता बिना किसी प्रकार का प्रतिफल पाए अपनी संतान के सब कार्य्य करती है उसी प्रकार संतान को भी अपनी माता का काम करने का अभ्यास डालना चाहिए। बालकों को बड़ों की भाँति गृहस्थी का काम करने में किसी प्रकार की कठिनता न बोध करनी चाहिए। इस प्रकार बहुत शीघ्र वे प्रसन्नतापूर्वक परिश्रम और काम करना भी सीख जायंगे।

जहाँ तक हो सके बालकों को अपना सब काम और गृहस्थी का या ऊपरी कुछ काम स्वयं करना चाहिए। यहाँ भी वही व्यापी सिद्धांत आ लगता है कि जहां तक हो सके बालक सब लोगों की सहायता करें। पर इसका यह भी तात्पर्य्य नहीं है कि बालक से खिदमतगार की भाँति काम लिया जाय। इसके लिए लोग स्वयं ही सोच समझ कर सीमा निर्द्धारित कर सकते हैं।

दूसरे बालक।

इस अवस्था में एक बालक का दूसरे बालकों के साथ दो प्रकार का संबंध होता है। एक तो वह अपने साथियों के साथ* बहुत सा समय खेल कूद में बिताता है और दूसरे उस समय छोटे बड़े का कोई ध्यान नहीं रह जाता। खेलनेवाले सभी बालक एक समान हो जाते हैं।

ऐसी अवस्था में बहुत संभव है कि बालकों में समदर्शिता न आवे और उनकी दृष्टि बहुत ही संकुचित हो जाय। यह बड़े भारी दोष का आरंभ है। उस दशा में बालक पर आपकी पहली समदर्शितावाली शिक्षा पर बहुत ही कम प्रभाव पड़ेगा और वे कुछ बड़े होने पर विद्यालयों में और बहुत बड़े होने पर संसार में इसी दूसरे संकुचित हृदयतावाले सिद्धांत का व्यवहार करेंगे।

यदि बड़े बालकों को एक दूसरे से मिलने न दिया जाय तो बात और भी बिगड़ जायगी। उनको अपने साथियों के संग रहने देना चाहिए। हाँ, उनपर कभी कभी और विशेषतः आरंभ में दृष्टि रखना आवश्यक है। आपको यह विश्वास करने का दृढ़ प्रयत्न करना चाहिए कि आपके बालक जिस प्रकार आपके साथ सत्यता, नम्रता और सभ्यता का व्यवहार करते हैं ठीक वैसा ही व्यवहार वे अपने साथियों के साथ भी करते हैं। बालकों के परस्पर संबंध और खेल आदि में सत्यता और एक दूसरे के सम्मान का बहुत अधिक ध्यान रहना चाहिए। बालकों के लिए खेल ऐसे होने चाहिएँ जिनसे उनका स्वास्थ्य अच्छा रहे, उनकी बुद्धि बढ़े, वे प्रसन्न रहें और लोगों से मिलना जुलना सीखें। इन खेलों से उन्हें अदब—क़ायदे की भी शिक्षा मिलनी चाहिए।

---

* छूतवाले रोगों से बचाने के लिए छोटे बालकों को दूसरे बालकों से सदा बचाते रहने की बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। बहुत से माता-पिता इस बात का बहुत अधिक ध्यान रखते हैं।

एक बार जब आपके बालक इन व्यापी सिद्धांतों का उपयोग अपने खेलों में करने लग जायँगे तो फिर आपको उनके खेलने कूदने आदि से बहुत ही कम भय रह जायगा। बालकों के खेलने का स्थान उनके लिए पहली सामाजिक सीढ़ी है और इसके आगे विद्यालय और उसके संगी साथी दूसरी सीढ़ियाँ हैं। पर जिस समय बालक बहुत ही छोटे हों उसी समय उन्हें इतना योग्य बना देना चाहिए कि उनका नैतिक आचरण किसी प्रकार बिगड़ने न पावे।

बालकों में कभी किसी प्रकार की उदासीनता न उत्पन्न होने देनी चाहिए। वे स्वभावतः प्रसन्न रहना चाहते हैं और उन्हें सदा उसी प्रकार रहने का अवसर मिलना चाहिए। आपके बड़े पद की मर्य्यादा इसी में होनी चाहिए कि आप सदा उनकी प्रसन्नता बढ़ाते रहें। पर साथ ही यहाँ भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सभी कार्य्यों में कभी कभी होनेवाली अकृतकार्य्यता बहुत ही थोड़े महत्त्व की होती है।

सह-योग।

विशेष अवसरों पर एक दूसरे के साथ ख़ूब मिल जुल कर रहने की भी शिक्षा दी जानी चाहिए।

(१) आरंभ से ही बालकों को एक दूसरे के साथ रहने की शिक्षा दी जानी चाहिए।

(२) यदि हो सके तो आप दो तीन बालकों को एक साथ गोद में लें।

(३) आप प्रायः एक से अधिक बालकों को खेलावें।

(४) यदि कोई बात कहें तो कई बालकों से कहें और यदि कोई चीज़ दें तो कई बालकों को दें।

(५) सब बातों में सब बालकों को पारी पारी से सम्मिलित होना चाहिए।

(६) सब बालकों को साथ खेलना और टहलना चाहिए।

(७) किसी खेल या काम में दो या अधिक बालकों को लगाना चाहिए।

(८) उनसे स्वयं सहायता लेनी चाहिए और दूसरों की सहायता करानी चाहिए।

(९) उनसे परस्पर एक दूसरे की सहायता और सेवा करानी चाहिए।

इस प्रकार प्रत्येक अवसर का उपयोग करने से आपके बालक भी आपकी भाँति नीति के इन साधारण सिद्धांतों का उचित उपयोग करने लगेंगे, और ऐसा होते ही यह सिद्ध हो जायगा कि बालकों को उच्च आदर्श बनाना असंभव नहीं है।

आदर्श और उपदेश।

चाहे आप यह न जानते हों कि बालक केवल आपके कामों की ही नक़ल नहीं करते बल्कि आपके आचरणों और विचारों की भी नक़ल करते हैं, पर आप यह अवश्य जानते हैं कि उनकी प्रकृति बहुत ही अनुकरणप्रिय होती है। इस बात का जानना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इसी अनुकरण से उनका जीवन उत्तम या निकृष्ट होता है। यदि आप ढाई बरस से अधिक के बालकों के कृत्यों पर ध्यान देंगे तो आपको मालूम हो जायगा कि सुजनता क्रोध, भय, अनुराग और इच्छा तथा विचार-शक्ति की दुर्बलता या सबलता आदि में भी वे सदा आपके अनुगामी रहते हैं। इसलिए यह बात बहुत ही आवश्यक है कि आपकी आवाज़, आकृति, शब्द, चलना फिरना, सहनशक्ति और आचार विचार आदि सभी बातें यथाशक्ति निर्दोष और पूर्ण हों।

आपके उत्तम विचारों और अभ्यासों से इस काम में और भी सहायता मिलती है। आपको सदा दृढ़-निश्चयी होना चाहिए और कभी ऐसे शब्दों का स्वयं व्यवहार न करना चाहिए जो दोष, अनौचित्य, या कष्ट आदि के वाचक हों। आपको सदा अपनी सहनशीलता, धैर्य्य और साहस का परिचय देना चाहिए, सूर्य्यास्त, फूलों, पक्षियों तथा अन्य सभी प्राकृतिक शोभाओं या पदार्थों की प्रशंसा करनी चाहिए, स्वयं परिश्रमी, फ़ुर्तीला, दृढ़, धीर

और सचेष्ट होना चाहिए, छोटे छोटे दुःखों या कष्टों को कुछ न समझना चाहिए, सदा दूसरों की सहायता करनी चाहिए, सादा जीवन व्यतीत करना चाहिए, अपने विचारों को शुद्ध रखना चाहिए, अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ना और बड़े बड़े महानुभावों के समीप रहना अथवा उनका गुणानुवाद करते रहना चाहिए और इन कामों में और लोगों तथा उनके बालकों की सहायता करनी चाहिए। ऐसा करने से आपके बालक उत्तम मनुष्यों या पदार्थों का आदर करना सीखेंगे और उनमें उक्त सभी गुण आ जायँगे।

पर इन सब बातों को केवल बालक की अनुकरणप्रियता पर ही न छोड़ देना चाहिए बल्कि बीच बीच में इन बातों की ओर उनका ध्यान आकर्षित कराते रहना चाहिए और समय समय पर साधारण शब्दों में अपने उत्तम विचारों से उन्हें अवगत करते रहना चाहिए। पर साथ ही यह बात ध्यान रखने योग्य है कि ऐसा करते समय किसी एक ही बात पर बहुत अधिक वादाविवाद न करना और बालकों की अवस्था का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है।

केवल अपने आदर्श पर निर्भर करना भी कभी कभी वृथा होता है क्योंकि बालक यह नहीं समझ सकते कि उनसे किस प्रकार के आचरण की आशा की जाती है। इसके सिवा किसी का ठीक ठीक अनुकरण करना भी प्रायः बहुत कठिन होता है। इसलिए बालकों के सामने आदर्श उपस्थित करने के साथ साथ उन्हें उपदेश देने की भी आवश्यकता होती है। यदि उन्हें केवल उपदेश दिया जाय और उनके सामने कोई उत्तम आदर्श न उपस्थित किया जाय तो भी उससे हानि ही होगी; वे दूसरों को उपदेश देना तो अवश्य सीख जायँगे पर स्वयं उनके आचरण पवित्र न हो सकेंगे।

इसके अतिरिक्त विरुद्ध या बुरी परिस्थिति में पड़ने से अनजान में पड़ी हुई अथवा कोरी आदतें शीघ्र बदल जाती हैं और केवल ज्ञानयुक्त विचार ही कठिन आक्रमणों का सामना कर सकते हैं। इसलिए अभिज्ञ और अनभिज्ञ दोनों प्रकार के आदर्श, उपदेश और शिक्षा समान रूप से आवश्यक हैं। स्वयं बहुत थोड़ा काम करते हुए बालकों से बहुत कुछ आशा करके अपना बोझ हलका करना और सब बातों को अनभिज्ञ आदर्श और अनुकरण पर छोड़ देना मानों निराशा का आह्वान करना है।

आदर्श या उदाहरण उसी दशा में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और उपयोगी हो सकता है जब कि उसके साथ साथ नीति की शिक्षा भी हो। साथ ही यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि आदर्श सर्वोत्तम और सर्वाङ्गपूर्ण होना चाहिए और अपने संबन्धियों तथा और लोगों के साथ भी आपका संबन्ध और व्यवहार वैसा ही होना चाहिए जैसा कि अपने बालकों के साथ होता है। नहीं तो आपके उपस्थित किए हुए आदर्श कई प्रकार के होंगे और बालक उनमें से किसी एक को ग्रहण कर लेंगे।

कुछ लेखकों का मत है कि छोटे बालक स्वभावतः ही बुरे और दुष्ट होते हैं और उनकी सारी प्रवृत्ति स्वयं अपने ही विचारों की ओर होती है; पर जो माता-पिता अपने बालकों के आचरण पर पूरा ध्यान रखते हैं वे समझ लेंगे कि यह मत कितना निस्सार है। अनेक ऐसे छोटे बालक देखे गए हैं जो स्वभावतः ही बुरी बातों या कामों से घृणा करते हैं। इसके अतिरिक्त बालकों में अनुराग और सहानुभूति की मात्रा भी बहुत अधिक होती है। दूसरों को चोट लगने पर वे चिल्ला उठते हैं, दूसरों को मार पड़ते देखकर वे दुखी होते हैं और वयस्क पुरुषों की भाँति अच्छे बुरे का निर्णय करने के चिह्न उनमें पाए जाते हैं।

प्रायः देखा जाता है कि यदि कोई मनुष्य हँसी में किसी बालक पर बहुत अधिक बिगड़ता या उसे मारने पर उद्यत होता है तो वह बालक भी सरलता से तुरंत उसकी हूबहू नक़ल कर बैठता है। मनुष्य के आचरण की सृष्टि उसकी परिस्थिति से ही होती है और उसी के अनुसार उसमें सद्गुण या दुर्गुण आते हैं। आदर्श और उपदेश का महत्त्व इसी कारण है।

यदि आप सूचना (चेतावनी) और (परीक्षा या प्रयोग द्वारा) अनुभव कराने का भी ध्यान रक्खें तो आप की शिक्षा-पद्धति बिलकुल आधुनिक हो जायगी।

शिक्षा और प्रयोग।

(क) बालकों को इस बात की शिक्षा देने की बहुत बड़ी आवश्यकता है कि किस प्रकार स्नान और भोजन आदि करना, कपड़े पहनना और उठना बैठना चाहिए; पर आश्चर्य्य है कि इस प्रकार की शिक्षा का प्रायः सभी जगह बहुत अधिक अभाव है। प्रायः माता-पिता बीच बीच में बालकों को कुछ बातें बतला देना, अनुचित कार्य्य के लिए मना कर देना और भारी भूलों को सुधार देना ही अपना कर्त्तव्य समझते हैं। पर वास्तव में बालकों को ठीक तरह से नहाने धोने और खाने पहनने की शिक्षा देना और इस बात का ध्यान रखना कि वे इन बतलाई हुई बातों को सीखते हैं, या नहीं, बहुत ही आवश्यक और बुद्धिमत्ता का कार्य्य है।

इस सूचना या हिदायत से हमारा यह तात्पर्य्य है कि जिस पूर्णता और धैर्य्य से बालकों को विद्यालय में गणित या व्यायाम आदि की शिक्षा दी जाती है ठीक उसी प्रकार ध्यानपूर्वक उसे और और बातों की शिक्षा भी दी जानी चाहिए। बालकों को आधे काम के लिए दूना समय व्यर्थ नष्ट करने से केवल इसी प्रकार की शिक्षा बचा सकती है। यदि बालक को केवल आदर्श, उपदेश या अनुकरण पर ही छोड़ दिया जाय और उसे ठीक तरह से शिक्षा न दी जाय तो वह कभी अच्छी तरह नहाना धोना नहीं सीख सकता। इस प्रकार की शिक्षा की उपयोगिता और आवश्यकता आपको ढाई से सात वर्ष तक के बालक के लिए अच्छी तरह से मालूम हो सकती है।

(ख) वैज्ञानिक लोग परीक्षा द्वारा अनुभव करने पर बहुत अधिक ज़ोर देते हैं और जो अनुसंधान इस प्रकार सिद्ध नहीं होते उन्हें अपूर्ण मानते हैं। इसलिए यदि आप अपने बालकों को आधुनिक विज्ञान के अनुकूल बनाना चाहते हों तो आपको उचित है कि उनकी शिक्षा के लिए परीक्षा द्वारा अनुभव की सहायता से अग्रसर हों।

केवल आदर्श, उपदेश या समझाने बुझाने की अपेक्षा परीक्षा द्वारा किसी बात का अनुभव करा देना बहुत ही लाभदायक होता है। किसी बात के लिए हिदायत करने या उसे समझाने बुझाने में आप उस बात की केवल एक ही बार शिक्षा देते हैं और उस शिक्षा की पुनः आवृत्ति करने के लिए आपको संभवतः चौबीस घंटे तक ठहरना पड़ता है। उधर इन चौबीस घंटों में बालक बहुत कुछ भूल जाता है। लेकिन परीक्षा द्वारा अनुभव कराने में जब तक कि वह बात भली भाँति बालक की समझ में न आ जाय तब तक आप उसी बालक से वह काम कई बार करा लेते हैं। इसलिए वैज्ञानिक प्रयोगों की भाँति बालकों की शिक्षा में भी अनुभव द्वारा कोई बात सिखलाना बहुत ही उपयोगी होता है। इस प्रकार बालक को स्वच्छता, फुर्तीलेपन, नम्रता, सुजनता, परोपकार और सहनशक्ति की बहुत अच्छी शिक्षा मिल जाती है।

पहले पहल आप कह सकते हैं कि बालकोंमें परीक्षाद्वारा अनुभव करके कोई बात सीखने की योग्यता नहीं होती और वे धैर्य्यपूर्वक किसी एक ही प्रयोग को अनेक बार नहीं कर सकते। यह बात बहुत अंशों में ठीक भी है। यदि किसी बड़े वैज्ञानिक को बार बार एक ही प्रयोग करना पड़े तो वह भी अवश्य ही घबरा जायगा। पर कुछ अंशों में दूसरी बात भी सत्य है। यदि आप कोई प्रयोग विनोद और कौतुक के रूप में करेंगे, जैसा कि वह वास्तव में है भी, तो वह बालकों के लिए बहुत अच्छा खेल हो जायगा। बालकों को एक ही बात बार बार दोहराना बहुत अच्छा लगता है। यदि आप गिनते जायँ कि अमुक प्रयोग की कितनी आवृत्तियाँ हुईं और साथ ही आप इस बात का भी ध्यान रक्खें कि हर बार में उन्होंने कितनी उन्नति की है तो आपके बालक उसे खेल समझ कर उससे बहुत ही प्रसन्न होंगे। इसके अतिरिक्त प्रयोग में एक यह

भी गुण है कि उससे प्रत्येक प्रश्न का निर्णय बहुत शीघ्र और भली भाँति हो जाता है और इसी लिए उसका व्यवहार भी बहुत ही कम होता है जिसके कारण बालक घबराता नहीं।

(क) प्रत्येक मनुष्य सशक्त होना चाहता है; और इस अभिलाषा का उपयोग शिक्षा-संबंधी कार्य्यों में भी होना चाहिए।

"सशक्त" और "मनुष्य" बनो।

बालकों के हाथ, पैर तथा अन्य अवयवों का पुष्ट होना बहुत ही अच्छा है। शक्ति का प्रदर्शन और उपायों से भी हो सकता है। जो आदमी जल्दी जामे से बाहर हो जाता है वह अवश्य दुर्बल है। पर जो आदमी सदा अपने आपको वश में रख सकता है और किसी दशा में भी विचलित नहीं होता वह बहुत सशक्त है। आलसी होना दुर्बलता का चिह्न है और परिश्रिमी होना शक्ति-सम्पन्न होने का चिह्न है। शेखचिल्लियों की तरह पड़े पड़े मन के लड्डू बनाना दुर्बलता का चिह्न है और किसी विषय में भली भाँति विचार करके काम में लग जाना शक्तिमत्ता का चिह्न है। अपनी तथा औरों की सहायता करना भी शक्तिमत्ता का चिह्न है और केवल अपना ही ध्यान रखना और दूसरों से बात न पूछना दुर्बलता का चिह्न है। सदा उचित कार्य्य करना और मानव जाति की उन्नति में लगे रहना शक्तिमत्ता का चिह्न है और अनुचित कार्य्य करना तथा दूषित प्रवृत्तियों के अधीन हो जाना दुर्बलता का चिह्न है।

तीन बरस के बालक के लिए भी "सशक्त" होने का उतना ही उत्तम अभिप्राय है जितना कि तीस बरस के पुरुष के लिए। अतः यह बात बहुत आवश्यक है कि बालकों का ध्यान सदा इस ओर आकर्षित किया जाय कि अपने आपको वश में रखने और दूसरों की सहायता करने में शक्ति प्रकट होती है और अपने आपको वश में न रख सकने और केवल अपने स्वार्थ का ध्यान रखने से दुर्बलता प्रकट होती है। प्रायः लोग कहा करते हैं कि स्वभावतः मनुष्य सज्जन होने की अपेक्षा सशक्त होना अधिक पसंद करते हैं। पर आप अपने बालकों पर यह बात प्रमाणित कर सकते हैं कि यदि वे सशक्त, बलवान् और महानुभाव हुआ चाहते हैं तो उन्हें केवल सत्य का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

(ख) दूसरी अभिलाषा जो सब में होती है वह "मनुष्य" होने की है; और इस गुण को प्रायः लोग सुजनता का विरोधी समझते हैं।

आप स्वयं विचार कीजिए कि मनुष्य और पशु में क्या भेद है। पशु केवल अपने शरीर और प्रवृत्तियों पर ही निर्भर करता और सदा उन्हीं के वश में रहता है। यदि किसी मनुष्य का पालन पोषण सभ्य संसार से बाहर हो तो वह पशु से भी गया बीता हो जायगा क्योंकि उसे मार्ग दिखलाने के लिए किसी प्रकार की निश्चित प्रवृत्ति नहीं होगी और वह बहुत ही भद्दी तरह से अपनी इन्द्रियों को संतुष्ट करेगा। पशु की अपेक्षा मनुष्य में यही विशेषता है कि उसने बहुत से आविष्कार किए हैं और अनेक नई बातों का पता लगाया है। मनुष्य की सृष्टि दूसरों के साथ मिलकर काम करने और उनसे कुछ सीखने के लिए हुई है। वह अपनी समझ से काम लेने और किसी विशिष्ट आदर्श पर चलने के लिए बनाया गया है। यदि उसमें ये गुण न हों तो वह पशु-तुल्य है।

इसलिए "मनुष्य" बनने का अभिप्राय यह है कि—"अपनी असंस्कृत प्रवृत्तियों, वासनाओं और इंद्रियों के वशीभूत न हो। कोई काम बिना समझे बूझे या उतावलेपन से न करो। केवल अपने स्वार्थ का ही ध्यान न रक्खो। अपने जीवन को आदर्श बनाओ; अपने सब कार्य्य उसी आदर्श के अनुसार करो तब जाकर तुम वास्तव में मनुष्य होगे। जितना अधिक तुम आदर्श को अपना पथदर्शक बनाओगे उतना ही अधिक तुम मनुष्य बनोगे। और आदर्श का जितना ही कम ध्यान रक्खोगे उतना ही अधिक

तुम मनुष्यत्व की श्रेणी से नीचे गिरोगे। इसलिए तुम हिंसक पशु न बनो। मनुष्य बनो।

मनुष्य के इस वास्तविक स्वरूप का ध्यान रख कर आप कुछ समय में अपने बालकों को इस सिद्धांत का पक्षपाती बना सकेंगे। आप उनसे समय समय पर कह सकते हैं कि मनुष्य सीखता है, काम करता है, दूसरों को सहायता पहुँचाता है और अपने आपको वश में रखता है, आदि। बड़ों की तरह बालक भी अपने वर्ग के सच्चे प्रतिनिधि बनना पसंद करते हैं।

ज्यों ज्यों आपके बालक बड़े होते जायँ त्यों त्यों आप उन्हें भली भाँति यह बात समझाते जायँ कि वास्तव में "सशक्त" और "मनुष्य" होना किस को कहते हैं। आपका आधा उद्देश्य इसी से सफल हो जायगा।

पहली अवस्था में ढाई बरस की उमर तक बालक बोलचाल नहीं सकता मन। इसलिए उस समय तक प्रत्यक्ष रूप से उसे कोई बात नहीं सिखलाई जा सकती। पर दूसरी अवस्था में वह बात नहीं होती। उस समय आप बहुत भारी भारी प्रयोगों और जटिल विचारों को छोड़कर बाकी सब बातें उन्हें भली भाँति सिखला सकते हैं।

(क) पहली अवस्था की समाप्ति से कुछ पहले ही बालक सब चीज़ों के विषय में अनेक प्रकार के प्रश्न करने लग जाता है। इसलिए वह अवसर बहुत ही बहुमूल्य है; उस समय हम नीचे लिखे उपायों से उसका यह शौक़ बढ़ा सकते हैं।

(१) बालकों की भाँति स्वयं भी सब बातों और कार्य्यों में लगकर,
(२) बालक के शौक़ की प्रवृत्ति का ध्यान रखकर,
(३) प्रत्येक विषय की व्याख्या में इतना अधिक शौक़ बढ़ाकर कि जिसमें वह उसे भली भाँति समझ जाय और
(४) कोई बात समझाने के बाद फिर उसी से पूछकर।

दूसरी अवस्था की समाप्ति तक बालक जितनी बातें सीख सकता है यदि उसका मुकाबला किसी वयस्क मनुष्य की जानकारी से किया जाय तो बहुत कौतूहल होता है। उस समय तक बालक को कम से कम नीचे लिखी बातों का ज्ञान अवश्य हो सकता है—

(१) कम से कम अस्सी प्रकार के फूलों, फलों, वृक्षों, घासों और तरकारियों आदि का,
(२) प्रायः बीस तरह की चिड़ियों और पचास तरह के दूसरे जानवरों का,
(३) सूर्य्य, चन्द्र, तारे, छाया, वर्षा, बरफ़, कुहरा, इन्द्रधनुष, आकाश, मेघ, हवा, चट्टान, ज़मीन, सर्दी, गरमी और इन्हें नापने के यंत्रों तथा इसी प्रकार की और बहुत सी चीज़ों का,
(४) शरीर के बहुत से अवयवों का,
(५) भूगोल संबन्धी बहुत सी बातों का,
(६) पढ़ने, लिखने और साधारण गणित का और
(७) बहुत सी साधारण बातों का (जिनमें नीति संबन्धी विचार, श्लोकों तथा उत्तम कथाओं आदि का भी समावेश हो सकता है।)

प्रत्येक विषय की बहुत सी बारीकियाँ और विशेषताएँ बतलाकर आप बालकों को सब बातों का भली भाँति ऊँच नीच और गुण दोष समझने के योग्य बना सकते हैं। इस अभिप्राय के साधन के लिए उन्हें वृक्षों के तनों, डालियों, पत्तियों तथा भिन्न भिन्न फूलों के आकार, प्रकार और रंग आदि का ज्ञान कराने के अतिरिक्त निम्न-लिखित उपाय भी किए जा सकते हैं—

(१) ऋतुओं के प्रधान प्रधान परिवर्त्तनों और उनके कारण, पत्तियों और फूलों के लगने, गिरने, या रंग बदलने और किसी छोटे विशिष्ट वृक्ष की किसी विशेषता पर प्रत्येक ऋतु में मनन करना।

(२) पशुओं के बच्चों की विशेषताओं आदि पर ध्यान रखना।

(३) इस बात की शिक्षा देना कि प्रत्येक वस्तु सदा व्यवहार में लाते रहने से घिस या घट जाती है।

यदि नित्य की बातचीत में 'दहिना, बायाँ, पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, क्षितिज, चैाकोर, तिकोना, टेढ़ा, सीधा' आदि शब्दों का व्यवहार किया जाय अथवा छड़ी, छाता, घड़ी या शरीर के अवयवों आदि का ज़िक्र किया जाय तो बालकों का ज्ञान बहुत कुछ बढ़ सकता है। इसके सिवा वनस्पतिशास्त्र, रसायन, विज्ञान, भूगोल, ज्यौतिष आदि अन्य विषयों के मुख्य मुख्य पारिभाषिक शब्दों से भी उन्हें परिचित कराया जा सकता है।

बालकों को केवल बहुत से शब्द रटाने से ही काम नहीं चल सकता; उनसे उन शब्दों का स्पष्ट और उपयुक्त उपयोग भी कराना चाहिए। जब कभी आवश्यकता पड़े तो उनके सामने हर एक चीज़ को नाप, तैाल या गिन भी लेना चाहिए। पुस्तकें आदि पढ़ने पर विशेष ध्यान रखना चाहिए और प्रयोग आदि के लिए और बहुत से अवसर निकालने चाहिएँ।

(ख) जिन बालकों को इस प्रकार शिक्षा दी जाती है यदि उनसे किसी विषय में कोई बात पूछी जाय तो वे उसका बहुत ही उपयुक्त उत्तर देते हैं। उनका उत्तर इतना ठीक होता है कि उसे सुनकर लोग प्रसन्न हो जाते हैं। यदि किसी बालक को इस बात का अवसर दिया जाय कि वह किसी पदार्थ का कोई और एक गुण अथवा किसी एक घटना का कोई और एक कारण ढूँढ़ निकाले तो वह उसे मनोविनोद समझकर बहुत ध्यान से सोचने लग जाता है और अंत में गुण या कारण आदि ढूँढ़कर बहुत प्रसन्न होता है। बालकों से बराबर इस प्रकार के प्रश्न करना बहुत लाभदायक होता है। इस प्रकार के प्रश्न करते करते माता-पिता भले ही थक जायँ पर उत्तर देने में बालक कभी नहीं थकते।

(ग) परस्पर दो चीज़ों का मुक़ाबला करके उनके गुण दोष जानने के प्रायः बहुत से अवसर मिलते हैं; और शिक्षा देने का यह भी एक बहुत अच्छा प्रकार है। अगर आपका बालक बाजार में घूमने की अपेक्षा बाग में टहलना अथवा बाग में टहलने की अपेक्षा बाजार में घूमना अधिक पसंद करता हो तो आप उससे उसके कारण आदि पूछ सकते हैं। इसी प्रकार आप उनसे गृहस्थी के सब मनुष्यों, कपड़ों अथवा दूसरे पदार्थों में भेद और उनके गुण दोष आदि पूछ सकते हैं।

(घ) सब चीज़ों का सम-विभाग अथवा उन्हें श्रेणी-बद्ध करना कुछ कठिन काम है क्योंकि इसमें अधिक स्मरण और ज्ञान रखने की आवश्यकता होती है। तैाभी यदि बालकों को सब बातों के अंग प्रत्यंग भली भाँति बतलाए जा चुके हों तो उनसे यह कार्य्य भी कराया जा सकता है। यदि वे कहें कि तोते के दो पैर होते हैं तो उनसे पूछना चाहिए कि कैावे आदि के कितने पैर होते हैं। इस प्रकार धीरे धीरे उन्हें पक्षीमात्र के दो पैरों के होने का ज्ञान हो जाता है। इसी तरह आगे चलकर उन्हें गैाओं, बैलों और घोड़ों तथा दूसरे चैापायों के विषय में भी ज्ञान हो सकता है। इस प्रकार का सम-विभाग सब प्रकार के पेड़ों, पशुओं तथा अन्य सभी ऐसे पदार्थों का हो सकता है जिनसे बालक परिचित हों। इस प्रकार वे प्रत्येक वस्तु के यथार्थ भेद जान सकेंगे और उनका ज्ञान बढ़ेगा। पर इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि इस कार्य्य में वे अधिक सचेष्ट और उत्सुक रहें।

बालकों को जो बातें दिखलाई, समझाई या सुनाई जायँ उन्हें वे केवल मट्टी के पुतले की तरह देख, समझ या सुन न लें; इस काम के लिए उनकी विचार-शक्ति को पुष्ट करने की आवश्यकता होती है। पहली अवस्था के लिए बतलाई हुई बातों के सिवा उन्हें रोचक शब्दों में कहानियों की भाँति ऐतिहासिक घटनाएँ सुनानी चाहिएँ। साधारण किस्से कहानियों से इस संबन्ध में कोई विशेष लाभ नहीं होता। बालकों को प्राचीन रीति, नीति, व्यवहार और विश्वास आदि से परिचित कराना चाहिए।

इस प्रकार की कहानियों के संबन्ध में एक बात ग्रैर है। बालकों को कहानियाँ बहुत प्रिय होती हैं। यदि आप उन्हें बहुत सी मनोहर बातें साधारण रूप में बतलावें तो वे बड़ी प्रसन्नता से उन्हें सुनेंगे। टहलने आदि के समय तथा ग्रैर अवसरों पर हिमालय, पुरी ग्रैर इंगलैण्ड आदि की कल्पित यात्रा, तथा व्यास, मनु आदि महात्माओं की भेंट के बहाने से आप उन्हें बहुत सी उपयोगी बातें बतला सकते हैं। उन्हें ऐसी पुस्तकें दिखलानी ग्रैर पढ़ानी चाहिएँ जिनमें पशुओं, पक्षियों ग्रैर प्राकृतिक दृश्यों आदि के वर्णन ग्रैर सुन्दर चित्र आदि हों।* समाचारपत्रों आदि अथवा अन्य मार्गों से आपको जो नई बातें मालूम हों उन्हें भी आप बालकों को सूचना की भाँति नहीं, बल्कि विचित्र ग्रैर मनोहर कहानी के रूप में सुना सकते हैं।

बहुत ही साधारण कहानियाँ भी बहुत सी रोचक बातें मिलाकर बालकों को सुनाई जा सकती हैं। बालकों के विचार ग्रैर आचरण ख़ूब पुष्ट करके उन्हें जीवन की कठिनाइयों ग्रैर विपत्तियों का हाल सुनाना चाहिए। इस प्रकार उनमें उन्नति, सुधार ग्रैर विचार करने की शक्ति बढ़ेगी। अपनी बाल्यावस्था की घटनाओं ग्रैर अनुभव आदि का जिक्र भी समय समय पर बालकों के सामने करना चाहिए। ये बातें ऐसे रोचक ढंग से कही जायँ कि जिसमें बालक स्वयं बार बार वे बातें पूछा ग्रैर दोहराया करें। बालकों के सामने लंबे चौड़े उपदेश या व्याख्यान आदि कभी न देने चाहिएं।

पर इन सब बातों से स्मरण-शक्ति को बहुत ही थोड़ा लाभ पहुँच सकता है। ये बातें उनकी स्मरण-शक्ति को बढ़ाने, पुष्ट करने ग्रैर उसका ठीक उपयोग करने में बहुत ही थोड़ी सहायता दे सकती हैं। इसलिए उनके सामने आधुनिक घटनाओं का जिक्र कई बार करना चाहिए ग्रैर प्रायः अनुपस्थित मनुष्यों या पदार्थों का हाल भी सुनाते रहना चाहिए। बीच बीच में बालकों से भी कहना चाहिए कि वे उन सुनी हुई बातों को दोहरावें।

बालकों का अधिकांश समय प्रायः पढ़ने, लिखने, टहलने, किस्से कहानियाँ सुनने, व्यायाम करने, चित्र आदि देखने ग्रैर संभव हो तो बनाने तथा अनेक प्रकार के निर्दोष खेल खेलने में बीतना चाहिए। अपने सब बालकों के सुभीते के लिए सब प्रकार के कार्यों का एक क्रम बना लेना चाहिए। बालकों को शिक्षा देने के समय इस सिद्धांत का ध्यान रखना चाहिए कि बहुत छोटी अवस्था से ही किसी न किसी रूप में उनकी शिक्षा आरंभ हो, आरंभ में ही वे थक या उकता न जायँ ग्रैर ज्यों ज्यों पहले की बतलाई हुई बातें वे सीखते जायँ त्यों त्यों उन्हें ग्रैर नई बातें बतलाई जायँ।

यह बात भी बहुत आवश्यक है कि पढ़ने आदि के समय लड़का खेलने न लगे नहीं तो उसका समय भी व्यर्थ नष्ट होगा ग्रैर शिक्षक का भी। हाँ, स्वयं शिक्षा ही खेल या विनोद के रूप में होनी आवश्यक है। कदाचित् यहाँ यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि शिक्षक बहुत होशियार, जानकार ग्रैर धीर होना चाहिए।

सात से इक्कीस वर्ष तक की अवस्था ।

केवल एक अभ्यास ।

बालकों को बहुत सी ग्रैर एक दूसरे से असंबद्ध आदतें कभी न डालनी चाहिएं क्योंकि इससे बालक घबरा जाते हैं। आवश्यकता एक ऐसे छोटे ग्रैर सरल उपाय की है जो बुरी

---

* दुःख है कि अन्यान्य विषयों की पुस्तकों के साथ साथ हिन्दी में इस प्रकार की पुस्तकों का भी एकदम अभाव है। अँगरेज़ी में J. C. & E. C. Jack, London द्वारा प्रकाशित The Look About Your Nature Books ग्रैर Shown to the Children सीरीज़ की पुस्तकें तथा Macmillans & Co., की Science Readers आदि पुस्तकें इस संबन्ध में बहुत ही उपयोगी हैं।

आदतों को रोक सके और भली आदतों को बढ़ा सके। यह उपाय बालक का ध्यान और लक्ष्य एक आदर्श जीवन पर रखना है जिससे कि बुरी आदतें आपसे आप छूट जायँगी और अच्छी आदतें पड़ जायँगी।

तीसरी अवस्था के आरंभ में एक साधारण आदर्श की ही आवश्यकता होती है; अधिक ज़ोर इस बात पर देना चाहिए कि उनके सब कार्य्य क्रमयुक्त और व्यवस्थित हों, वे सत्यप्रिय हों और दूसरों से प्रेम करना सीखें। शेष सभी गुणों को इन तीनों गुणों के अंग समझना चाहिए। इसके सिवा उन्हें सदा सत्यता-पूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए उत्तेजित करना चाहिए क्योंकि बहुत से छोटे छोटे स्वतंत्र अभ्यासों की अपेक्षा केवल सत्य जीवन का विचार बहुत ही उपयोगी और यथेष्ट है।

उक्त तीनों गुणों को भी केवल एक आधार पर लाकर अवलंबित कर देना चाहिए और वह आधार 'व्यवस्था' है जिसका अभिप्राय यह है कि चित्त, जीवन, नगर, समाज, देश और यहाँ तक कि मानव जाति भर को व्यवस्थित रहना चाहिए। दूसरे अर्थ या शब्दों में इसे सहयोग या सहकारिता भी कह सकते हैं।

बालकों और बालिकाओं के लिए जीवन के बड़े और गूढ़ रहस्य उसी समय खुल जाने चाहिएं जब कि वे बढ़कर युवा और युवतियाँ अथवा पुरुष और स्त्रियाँ हों। उसी समय आपको जीवन के इस मुख्य सिद्धांत पर भी पूरा जोर देना चाहिए कि प्रत्येक कार्य्य, विचार, भाषण और लेख आदि में प्रत्येक मनुष्य का सर्वोत्कृष्ट उद्देश्य केवल यही होना चाहिए कि वे दृढ़ता, बुद्धिमत्ता, सहानुभूति और योग्यता-पूर्वक केवल वही कार्य्य करें जिसके पक्ष में उनका जागृत और प्रकाश-पूर्ण मनोदेवता हो। मनुष्यत्व का वास्तविक अर्थ यही है और इसी को अपना आदर्श बनाना चाहिए।

युवावस्था के विशेष गुण।

पहली और दूसरी अवस्था के लिए जो बातें बतलाई गई हैं, तीसरी अवस्था के आरंभ में भी वह बातें भूल न जानी चाहिएं। व्यवस्था, सादा जीवन (जिसमें परिश्रम-पूर्वक कार्य्य करना और प्रसन्न रहना आदि बातें सम्मिलित हैं) और परोपकार आदि पहली और दूसरी अवस्था की भांति तीसरी अवस्था में भी बहुत आवश्यक हैं। उस समय आप यह मान लेते हैं कि पहली और दूसरी अवस्था में बालक में बहुत से गुण आ गये हैं और अब उन्हींके विकसित और उन्नत करने की आवश्यकता है।

ऊपर कहे हुए अनेक गुणों के अतिरिक्त और भी कई गुण ऐसे हैं जिन पर कि इस अवस्था में बहुत अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

(१) सब से मुख्य बात यह है कि जिस काम को मनुष्य युक्ति-युक्त और ठीक समझे उसे बिना किसी प्रकार का आगा पीछा सोचे हुए कर डाले। इस प्रकार बालक बहुत से अच्छे कार्य्य कर डालेंगे और बुरे कार्य्यों से बचे रहेंगे।

(क) यदि व्यवस्था, सत्यता, परिश्रम, शुद्धता, धार्म्मिकता, उत्तम संगति, विद्या, कला और प्रकृति पर प्रेम तथा सदा उत्तम कार्य्यों में लगे रहने को सत्य और उत्तम गुण मान लिया जाय तो इस सिद्धांत का यह अभिप्राय है कि आवश्यकता पड़ने पर बालक अपने सिद्धांतों की पुनरावृत्ति करने न बैठ जायँ। उन्हें पहले उचित है कि वे कोई कार्य्य करें और तब जिस प्रकार चाहें विचार करें कि भविष्य में वे किस प्रकार कार्य्य करेंगे। यदि अपनी कोई अनुचित वासना पूरी करने के बाद बालक इस बात पर विचार करें कि उनका वह कृत्य युक्तिसंगत था वा नहीं और भविष्य में वे किस प्रकार कार्य्य करेंगे तो वे उस प्रकार की वासनाएं करना बहुत से अंशों में छोड़ देंगे।

इसका तात्पर्य्य यह है कि किसी कार्य्य करने के उचित ग्रैार अनुचित उपाय के निर्णय का भार बालकों पर ही छोड़ देना चाहिए ग्रैार वह कृत्य करने के समय कभी उनसे पूछताछ न करनी चाहिए। ग्रैार यदि हमें किसी सत्य का निर्णय करने में महीनों या बरसों लगे हों ते उसे अपना आदर्श बना कर कार्य्य रूप में परिणत करने से पहले हमें महीनों या बरसों उसपर .खूब विचार कर लेना चाहिए।

(ख) तीसरी अवस्था का प्रधान आवश्यक गुण "सत्यता" भी है जिसका तात्पर्य्य यह है कि मनुष्य में सत्य के प्रति भरपूर अनुराग रहे।

इस गुण के प्रभाव से आपके बालक (१) कभी कोई बात आपसे न छिपावेंगे; (२) कभी कोई बुरा या नीच कर्म्म न करेंगे; (३) बुरे आदमियों का साथ छोड़ देंगे; (४) किसी प्रकार के बुरे गुप्त कार्य्यों में सम्मिलित न होंगे; ग्रैार (५) वे सदा परस्पर ग्रैार दूसरों के साथ ईमानदारी से रहेंगे।

माता-पिता, साथियों, संबंधियों तथा ग्रैार लोगों के साथ उनका व्यवहार निष्कपट ग्रैार निष्कलंक होना चाहिए। यदि वे एक बार सत्यनिष्ठ हो जायँ तो आपको इस बात पर भी .खूब ध्यान रखना चाहिए कि वे पाठशाला में तथा उसके बाहर उत्साह-पूर्वक पढ़ने ग्रैार शिक्षा प्राप्त करने में लगे रहें।

इसके अतिरिक्त उस अवस्था के लिए ग्रैार भी अनेक आवश्यक गुण हैं, यथा,—विचारों, कार्य्यों ग्रैार बातचीत में पूरी सत्यता, सब प्रकार के मादक द्रव्यों से दूर रहना, पढ़ने लिखने ग्रैार दूसरे कामों में .खूब जी लगाना, योग्य ग्रैार प्रतिष्ठित लोगों का साथ करना आदि। यह सब गुण एक मात्र "सत्यता" की सहायता से ही आ सकते हैं।

(ग) सत्य से मिलता जुलता गुण माता-पिता पर श्रद्धा ग्रैार विश्वास रखना भी है। युवावस्था में यह गुण बहुत आवश्यक ग्रैार महत्त्वपूर्ण है। सयाने बालकों को बिना आपकी सम्मति के कभी किसी प्रकार का बड़ा कार्य्य न करना चाहिए। इस प्रकार अन्य उपायों की अपेक्षा आप कहीं उत्तमता से उनके आचरण सुधार सकते हैं। सच्चे ग्रैार श्रद्धालु बालक बड़े दृढ़ ग्रैार साहसी होते हैं ग्रैार झूठी अथवा ऐसी बातों से बहुत घृणा करते हैं जो अपने माता-पिता से छिपाने योग्य हों।

(घ) बालक ज्यों ज्यों बड़े होते जायँ त्यों त्यों उनमें विचारों की पवित्रता का बढ़ना भी बहुत आवश्यक है। उन्हें सदा दूसरों की आवश्यकताओं, विचारों ग्रैार मानसिक स्थिति का पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए ग्रैार सदा ग्रैारों के प्रति यथोचित सहानुभूति प्रदर्शित करनी चाहिए।

(च) तीसरी अवस्था की नैतिक शिक्षा की पूर्त्ति की लिए दो ग्रैार गुण भी आवश्यक हैं। एक तो उचित उपाय से जीविका उपार्जित करने का विचार उनमें .खूब दृढ़तापूर्वक होना चाहिए ग्रैार दूसरे उन्हें अपने व्यापार या कारबार में .खूब ईमानदार ग्रैार होशियार होना चाहिए। इस अवस्था के अंत में एक दृढ़ ग्रैार बुद्धिमान् नागरिक के लिए परोपकारी ग्रैार दूसरों का सहायक होना भी आवश्यक है जिसका फल मनुष्य-जाति की एकता ग्रैार उन्नति है।

माता-पिता ग्रैार शिक्षा-काल।

अब वह समय आ गया है कि जिसमें प्रत्येक बालक के लिए पाठशाला जाना परम आवश्यक है ग्रैार सात वर्ष की अवस्था में पाठशाला जाना आरंभ हो जाना चाहिए। इस अवस्था से आगे गृह-शिक्षा के बहुत से अंशों को भी बालक की पाठशाला-शिक्षा के साथ सम्मिलित कर देना चाहिए।

पाठशाला में जानेवाले बालकों के लिए .खूब साफ़ सुथरा रहना बहुत आवश्यक है। इसके सिवा उन्हें समय की भी पूरी पूरी पाबंदी करनी चाहिए। पाठशाला में उन्हें कभी अनुपस्थित न होना चाहिए। माता-पिता को इस बात पर पूरा

पूरा ध्यान रखना चाहिए कि उनके बालक नियमित रूप से पढ़ने जाया करें क्योंकि शिक्षक लोग प्रत्येक बालक पर अलग अलग इतना अधिक ध्यान नहीं रख सकते। जो बालक बीच बीच में पाठशाला नहीं जाते वे पिछड़ जाते हैं ग्रैार छूटे हुए पाठों को फिर से याद करना उनके लिए बहुत कठिन हो जाता है। कभी कभी इस कारण पाठशाला की कक्षाग्रों में भी बहुत अव्यवस्था फैल जाती है।

यदि बालकों का भोजन सादा ग्रैार अच्छा हो, वे खूब खुली ग्रैार ताज़ो हवा में रक्खे जायँ, उनसे व्यायाम कराया जाय ग्रैार उन्हें छूतवाले तथा अन्य रोगों से रक्षित रक्खा जाय ते। उनकी पढ़ाई में भी बहुत कुछ सरलता ग्रैार सहायता हो सकती है। जहाँ तक हो सके बालक को ख़ूब शिक्षा देनी चाहिए, समय समय पर स्कूल के हेड मास्टर तथा अन्य शिक्षकों से मिल कर बालक का हाल चाल पूछते रहना चाहिए, बालकों के पढ़ने लिखने में स्वयं भी उनकी सहायता करनी चाहिए ग्रैार उनके साथ पढ़ना लिखना चाहिए, उनसे पाठशाला आदि के संबंध में बातें करनी चाहिएँ ग्रैार उन्हें मानसिक ग्रैार नैतिक उन्नति के लिए सदा उत्साहित करते रहना चाहिए। यदि चित्र-विद्या अथवा इसी प्रकार की ग्रैार किसी कला की ग्रोर बालक की विशेष रुचि हो ते। उसे उसी की विशेष शिक्षा दिलवानी चाहिए। उसमें प्रकृति ग्रैार कला आदि के प्रति अनुराग उत्पन्न करना चाहिए।

घर पर भी बालकों के पढ़ने लिखने का पूरा प्रबंध ग्रैार सामान होना चाहिए। भिन्न भिन्न प्रदेशों के मान-चित्र, इतिहास, विज्ञान, शिल्प तथा साधारण ज्ञान संबंधी अच्छी अच्छी पुस्तकें, संस्कृत आदि की छोटी छोटी उत्तम पुस्तकें, सूक्ष्मदर्शक यंत्र आदि का संग्रह आवश्यक है। बालकों के खेल ग्रैार विनोद आदि का भी कुछ प्रबंध रहना चाहिए।

बालकों को भी उचित है कि वे सब बातों में अपने छोटे भाइयों ग्रैार बहनों की सहायता किया करें ग्रैार यथाशक्ति गृहस्थी के कामों में हाथ बँटाया करें। सब बालकों में परस्पर एकता ग्रैार सहानुभूति होनी चाहिए। जब बालकों का शिक्षाकाल समाप्ति पर हो ते। उनके भविष्य जीवन के संबंध में उनसे बातचीत करनी चाहिए।

इससे पहले बालक केवल आपके ही निरीक्षण में रहते थे; पर अब उन्हें बहुत से सहायक, पथदर्शक ग्रैार आदर्श मिल जाते हैं ग्रैार बहुत संभव है कि उनमें से कुछ लोग अविश्वस्त हों। इसलिए यह बात बहुत आवश्यक है कि आप स्वयं ऐसे लोगों से प्रीतिभाव रक्खें ग्रैार बालकों को मिलने जुलने दें जो आप के शुभचिंतक हों ग्रैार आपके बालकों के दोष दूर करके उनमें गुण उत्पन्न करें।

विद्यालय ग्रैार घर।

विद्यालय ग्रैार घर की सब बातों में समानता होनी चाहिए ग्रैार इससे बढ़ कर ग्रैार कोई अच्छी बात नहीं है कि दोनों स्थानों की प्रणालियाँ एक समान हों। अभी तक लोगों का ध्यान इस ग्रोर नहीं गया है। इसी से घर के लिए कोई प्रणाली निश्चित ही नहीं होती ग्रैार कदाचित् इसी कारण विद्यालय में भी घर की स्थिति पर कुछ ध्यान नहीं दिया जाता। वास्तव में माता-पिता को वर्त्तमान स्थिति का बहुत ही कम ज्ञान होता है ग्रैार वे विद्यालय के उद्देश्यों ग्रैार कार्य्यों से अपरिचित ही होते हैं।

यूरोप अमेरिका आदि सभ्य देशों में लोग इस बात का प्रयत्न करते हैं कि बालकों के अभिभावकों की सभाएँ बनें जिनके प्रतिनिधि समय समय पर शिक्षा विभाग के अधिकारियों से मिल कर इस बात का प्रयत्न करें कि बालकों के लिए विद्यालय ग्रैार घर की प्रायः सभी बातें समान रूप में हों। अमेरिका के संयुक्त राज्य में बालकों के अभिभावकों को समय समय पर विद्यालय में निमंत्रित करने की प्रथा है। सभ्य देशों में लोग इस बात का उद्योग करते हैं कि संध्या समय अभिभावक ग्रैार शिक्षक एक स्थान पर एकत्र होकर आपस में बात चीत

किया करें और घर तथा विद्यालय-संबंधी वक्तृताएँ दिया करें। अभिभावकों के यहाँ शिक्षक और शिक्षकों के यहाँ अभिभावक आया जाया करें। कम से कम प्रधान शिक्षकों और उनके सहकारियों को तो नियमपूर्वक अभिभावकों से अवश्य मिलना चाहिए।

तथापि यह सब बातें बहुत साधारण हैं। घर में यथेष्ट शिक्षा का अभाव, व्यवस्थित शिक्षा का सारा भार मानों विद्यालय पर छोड़ देता है। इसलिए विद्यालय में जानेवाले बालक प्रायः अयोग्य ही निकलते हैं और उनकी व्यवस्थित शिक्षा में शिथिलता होती है। साधारणतः शिक्षा का आरंभ जन्म से ही होना चाहिए। यदि बालक की सात वर्ष की अवस्था तक उसपर कुछ भी ध्यान न दिया जाय तो विद्यालय क्या, और भी कोई शक्ति उसका कल्याण नहीं कर सकती। इसलिए इस बात की सबसे अधिक आवश्यकता है कि विद्यालय और घर की शिक्षा-प्रणाली प्रायः एक ही समान हो।

विचार, तुलना, निर्णय, सम-विभाग, स्मरण-शक्ति आदि तथा भली भाँति बातचीत करने की शिक्षा बालकों को घर में ही मिलनी चाहिए और विद्यालय में जाने से पहले उन्हें प्रकृति, मानवजाति तथा संसार संबंधी बहुत सी बातों का ज्ञान होना चाहिए। यदि इन बातों के साथ साथ उन्हें नैतिक शिक्षा भी दी जाय और उनकी शारीरिक दशा सुधार दी जाय तो विद्यालय की शिक्षा का उनपर बहुत ही उत्तम प्रभाव पड़ सकता है।

इस प्रकार विद्यालय भी बालकों के लिए घर के ही तुल्य हो जाता है और घर उनके लिए ऐसा विद्यालय हो जाता है जहाँ उन्हें उत्तम मानसिक और नैतिक शिक्षा मिलती है * और जहाँ आज कल के विद्यालयों की अपेक्षा अधिक उत्तम प्रकार से उन्हें उपयोगी ज्ञान प्राप्त कराए जाते हैं।

घर और विद्यालय को एकरूप बनाने के लिए शिक्षा-विभाग के अधिकारी सब से अच्छा उपाय यह कर सकते हैं कि वे अभिभावकों आदि के लिए ऐसी कक्षाएं खोल दें जहाँ उन्हें बालकों को घर पर शिक्षा देने का काम सिखलाया जाय।

परवर्त्ती शिक्षा।

प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करने के उपरान्त भी बालकों के प्रति माता-पिता का वही कर्त्तव्य रहता है जो उससे पूर्व था। भेद केवल इतना ही है कि दूसरी अवस्था में आदर्श अधिक निश्चित और प्रशस्त हो जाता है।

योग्यता और अवस्था के अनुसार बालकों को अच्छे अच्छे निबंध, काव्य, इतिहास, नाटक, दर्शन तथा अन्य उत्तम उत्तम ग्रंथ पढ़ने के लिए उत्साहित करना चाहिए। उन्हें प्राकृतिक सौंदर्य्य का उपासक और शिल्प-कला का प्रेमी बनाना चाहिए। उन्हें इस बात की शिक्षा मिलनी चाहिए कि वे केवल परम आवश्यक कार्य्य करें और अनावश्यक बातों की ओर बिलकुल ध्यान न दें। उन्हें अपने भविष्य, पेशे, कारबार, परोपकार तथा कर्त्तव्य आदि पर भी विचार करते रहना चाहिए। सयाने बालकों को इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक है कि वे आगे चलकर गृहस्थ होंगे और उनपर गृहस्थी का भारी उत्तरदायित्व आ पड़ेगा।

यदि विद्यालय का प्रबन्ध ठीक हो और उसके अधिकारी अपना कर्त्तव्य भली भाँति पालन करते हों तो वहाँ भी आपके इन विचारों और कार्य्यों का समर्थन होगा, और यदि बालक छात्रावास में हो तो आपका कर्त्तव्य वहीं के द्वारा पालन होता रहेगा।

उम्मेदवारी।

बालक की शिक्षा की समाप्ति पर आपको उसके भविष्य की चिंता आ घेरेगी, और यह चिंता उपेक्षा करने योग्य नहीं है।

* जो लोग यह जानना चाहते हों कि विद्यालय में बालकों के आचरण किस प्रकार सुधारे जा सकते हैं, उन्हें Moral Education League, 6 York Buildings, Adelphis, London से पत्र व्यवहार करना चाहिए।

जीविका ऐसी पसंद करनी चाहिए

(१) जिसमें ईमानदार होने की उत्तेजना मिले,

(२) जो बहुत अधिक शिथिल कर देनेवाली अथवा स्वास्थ्य को हानि पहुँचानेवाली न हो,

(३) जिसमें सारी गृहस्थी के पालन के लिए यथेष्ट आय हो सके,

(४) जिसमें कभी बेकार बैठने की नौबत न आवे और

(५) जो सामाजिक दृष्टि से लाभदायक हो और जिसमें मनुष्य चतुर हो सके।

विद्यालय की भाँति उम्मेदवारी भी बालक के लिए एक प्रकार का नवीन संसार है। इस अवस्था में उसके पहलेवाले साथी नहीं रह जाते, उसपर उतनी अधिक तीव्र दृष्टि नहीं रक्खी जाती और उसपर अनेक कार्य्यों का भार आ पड़ता है। वह अपनी जीविका उपार्जित करना आरंभ कर देता है और स्वतंत्र तथा उत्तरदायित्व-पूर्ण जीवन व्यतीत करने की तैयारी करता है।

जो विद्यालय देश और काल की वर्त्तमान स्थिति पर पूरा पूरा ध्यान रख कर चलाया जाता है, वहाँसे निकले हुए बालकों को आगे चलकर कर्त्तव्य-जगत में किसी प्रकार की कठिनता नहीं होती। पर जिस विद्यालय में इन बातों का ध्यान नहीं रक्खा जाता उसके बालकों को संसार में प्रवेश करने के समय बड़ी भारी क्रांति का सामना करना पड़ता है। जिन स्थानों में विद्यालयों का ऐसा उचित और संतोषजनक प्रबन्ध न हो वहाँ माता-पिता को उचित है कि वे बालकों को साथ ही साथ सांसारिक अनुभव की शिक्षा भी अवश्य दिया करें।

जिस बालक को विद्यालय या घर में इस प्रकार की शिक्षा नहीं दी जाती उसे जीविका के आरंभ में बहुत कठिनाइयाँ होती हैं। जिसे वह स्वतंत्रता समझता है वह उसके लिए बन्धन स्वरूप हो जाता है और इसलिए उसे अपने आचरण और व्यवहार में परिवर्त्तन करना पड़ता है। बात चीत करने में उसकी नम्रता नष्ट हो जाती है, उसके पवित्र विचार दूषित हो जाते हैं, वह भाँग, तंबाकू आदि का शौकीन हो जाता है और उसे अनेक प्रकार के दुर्व्यसन आ घेरते हैं। उसके हृदय में औरों के लिए आदर नहीं रह जाता, वह सुस्त हो जाता है और काम से जी चुराने लगता है। अर्थात् घर की उत्तम शिक्षा के अभाव के कारण उसमें बहुत से ऐब आ जाते हैं।

बालकों के शिक्षा-काल में इस बात पर भी जोर देना चाहिए कि वे खूब स्वस्थ रहें और सादा जीवन व्यतीत करें। उन्हें इस बात की शिक्षा देनी चाहिए कि वे सब कामों को परिश्रम, उत्तमता, शीघ्रता और विचारपूर्वक करें और जहाँ तक हो सके उसे उपयोगी और मनोहर बनाने में कसर न करें और सदा सब कामों में पूरे ईमानदार रहें। इसके अतिरिक्त विद्यालयों, पुस्तकालयों, अजायब-घरों और बड़े बड़े बाजारों तथा अन्य स्थानों में घूम घूम कर वहाँ की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करके अनुभवी बनें।

प्रायः ऐसा होता है कि पूरा ज्ञान और अनुभव न होने के कारण ही मनुष्य का आचरण बुरी तरह खराब हो जाता है। पर यदि माता-पिता को बहुत ही साधारण और छोटे छोटे दोषों के भयंकर दुष्परिणामों का परिचय हो और वे अपनी संतानों को भी उनका ज्ञान प्राप्त करा दें तो ऐसी हानियों की संभावना नहीं रह जाती।

युवकों को दूसरों की बातों में न आना चाहिए और न नीच लोगों के फंदे में फँसना चाहिए; बल्कि उन्हें उन लोगों की स्थिति से भली भाँति परिचित होकर दूर रहना चाहिए। उन्हें किसी एक सुयोग्य और उपयुक्त व्यक्ति को अपना मित्र बना लेना चाहिए। उन्हें यह बात समझा देनी चाहिए कि बलवान् और बुद्धिमान् वही मनुष्य है जो अपने आपको वश में रख सकता है और जो अपने जीवन के महत्त्व को समझता है। इंद्रियों या वासनाओं के

वश में होना पशुओं का गुण है। यदि नैतिक विषयों में नहीं तो कम से कम व्यावहारिक विषयों में उसे बड़े बड़े अधिकारियों और व्यापारियों आदि को अपना गुरु समझना चाहिए। उस समय तक उसे यथेष्ट सामाजिक, धार्म्मिक और राजनीतिक शिक्षा भी मिल जानी चाहिए।

इस प्रकरण में "उम्मेदवारी" से दफ़्तरों में नौकरी के लिए मुँह ताकने का अभिप्राय नहीं है। यहाँ उम्मेदवारी से अभिप्राय किसी प्रकार की जीविका ढूँढ़ना है।

युवावस्था।

बालकों की युवावस्था में माता-पिता के लिए निम्न-लिखित बातों पर ध्यान रखना बहुत उपयोगी होगा।

(१) युवावस्था, विवाह तथा तत्सम्बन्धी अन्य आवश्यक बातों का महत्त्व और उत्तरदायित्व आदि।

(२) सादा और स्वास्थ्यप्रद जीवन व्यतीत करने, नित्य स्नान तथा यथेष्ट व्यायाम करने, मादक या पौष्टिक पदार्थों से दूर रहने, बहुत अधिक नहीं तथापि कठिन परिश्रम करने, अपनी तथा दूसरों की मर्य्यादा का ध्यान रखने, गाढ़ निद्रा में सोने, बहुत मुलायम बिछौने पर अथवा बहुत अधिक न सोने, जगाने पर तुरंत उठ बैठने आदि बातों का अभ्यास।

(३) साधारण सांसारिक तथा नैतिक बातों की शिक्षा।

(क) आरंभ से ही इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बालक गृहस्थी की सब बातों को समझता रहे। बालकों के साथ माता-पिता का प्रेम और व्यवहार, नित्य के सुख दुःख, माता का गृह-प्रबन्ध, पिता का धनोपार्जन, विवाहित पुरुषों का उत्तरदायित्व, माता पिता को आदर्श और स्थायी साथी समझना, विवाह की उपेक्षा न करना तथा घर को राष्ट्र का एक अंग समझना आदि बातें ऐसी हैं जिनका ज्ञान युवकों को करा देना बहुत आवश्यक है।

(ख) युवकों को साधारणतः यह भी बतला देना चाहिए कि युवावस्था में मनुष्य को अपने मन और इंद्रियों को सदा वश में रखना चाहिए, विशेषतः विवाहोपरांत इस बात की बहुत आवश्यकता होती है, स्वस्थ और पूर्ण शारीरिक वृद्धि के लिए इसकी बहुत आवश्यकता है, विवाहोपरांत और बड़े होने पर इससे अनेक लाभ होते हैं, अपनी स्त्री तथा संतान के स्वास्थ्य तथा उनके विचारों को शुद्ध करने का ध्यान रखना चाहिए, दुर्व्यसनों में पड़ने का परिणाम भयङ्कर होता है, बुरे अभ्यासों और साथियों से अपनी तथा अपने बड़ों की हतक होती है, वेश्या-गमन बहुत बुरा है और अनेक पशुओं के आचरण से भी गया बीता है, इससे मनुष्य का चरित्र भ्रष्ट हो जाता है, वासनाओं के वश में होना नीचता का चिह्न है, इससे हमारा सारा नैतिक-आचरण मट्टी में मिल जाता है, आदि आदि।

(४) माता-पिता को अपने बालकों के साथ अपने परम मित्रों की भाँति व्यवहार करना चाहिए और बालकों को भी सदा सब बातों में अपने माता-पिता से सम्मति ले लेनी चाहिए।

ज्ञान।

सात वर्ष की अवस्था तक बालकों को बहुत ही कम ज्ञान रहता है और वे तत्संबंधी बहुत ही थोड़ी बातें सीख सकते हैं। तीसरी अवस्था में उसमें बहुत कुछ उन्नति और वृद्धि हो सकती है। इक्कीस वर्ष की अवस्था तक अनेक कवियों, चित्रकारों और दार्शनिकों ने बहुत बड़े बड़े काम किए हैं।

जहाँ तक संभव हो, युवकों को उचित है कि वे प्रकृति, विज्ञान और संसार संबन्धी सभी आवश्यक बातें जान लें। उनकी विवेक-शक्ति को कभी कुंठित न करना चाहिए। बहुत ही साधारण और नित्य के व्यवहार की चीज़ों के संबंध में भी उन्हें बुद्धि-मत्ता-पूर्वक प्रश्न करते रहना चाहिए। राजनीति, शिल्प, कला, साहित्य, विज्ञान, गार्हस्थ्य जीवन आदि सभी विषयों की केवल उन्हीं बातों को सत्य और

युक्त मानना चाहिए जो परीक्षित हों। माता-पिता को इस बात का उद्योग करना चाहिए कि उनका मन सदा स्वतन्त्र, विवेकपूर्ण और कार्य्य-तत्पर रहे। दूसरी अवस्था में बालकों से प्रश्नोत्तर करके ही इस अभीष्ट की बहुत कुछ सिद्धि की जा सकती है।

तीसरी अवस्था के मध्य में ही उन्हें बहुत सी बातों का ज्ञान हो सकता है और वे अनेक बातों का स्मरण रख सकते हैं। प्राचीन साहित्य, काव्य, कला, विज्ञान और दर्शन आदि के अध्ययन से मनुष्य की विचार और स्मरण-शक्ति बहुत कुछ बढ़ सकती है। वैज्ञानिक प्रणाली की शिक्षा से उनकी स्मरण-शक्ति तीव्र, पुष्ट और उपयोगी बनाई जा सकती है। प्रत्येक बात पर शीघ्रता और ध्यान-पूर्वक पूरा पूरा विचार करने और सब बातों को स्मरण रखने, उनके संबंध में ज्ञान प्राप्त करने, उनको क्रम या श्रेणीबद्ध करने, और उसका अभिप्राय निकालने तथा उपयोग करने से मनुष्य की विचार-शक्ति बढ़ती है।

—:०:—

इक्कीस वर्ष से ऊपर की अवस्था।

स्वावलंबन।

इक्कीस वर्ष की अवस्था में मनुष्य को यथेष्ट ज्ञान हो जाता है और वह दूसरों पर अनुचित रीति से निर्भर न रह कर स्वयं अपनी समझ से काम करने के योग्य हो जाता है। तथापि यह समझना ठीक नहीं है कि अब उसको अभ्यास, आज्ञाकारिता या आदर आदि की आवश्यकता नहीं है अथवा वयस्क होते ही उसे और कोई नई बात सीखने की आवश्यकता नहीं रह जाती। ज्ञान की भांति ठीक तरह से जीवन व्यतीत करने में भी उन्नति के लिए कोई एक विशिष्ट समय निर्द्धारित नहीं किया जा सकता।

इसलिए उस समय भी उन्हें नए उत्तम अभ्यासों की आवश्यकता रहती है और उनका क्रम बराबर चलता रहना चाहिए। साधारण आज्ञाकारिता उस समय तक युक्ति और विवेक के अधीन हो जाती है और उसकी आवश्यकता भी बराबर पड़ती है। उस समय तक भी यह बात बहुत आवश्यक है कि जीवन सादा, सत्यतापूर्ण, परोपकारी, प्रसन्न, व्यवस्थित और उपयोगी हो और ज्यों ज्यों अवस्था बढ़ती जाय त्यों त्यों उत्तम जीवन का महत्त्व और उपयोग भी बढ़ता जाय। अब तक सीखी हुई बातों के उपयोग का यही समय आता है। उस समय मनुष्य को सच्चे और सुयोग्य नागरिक की भांति अपनी गृहस्थी, समाज, पेशे और मित्रों की यथेष्ट सेवा करनी चाहिए, औद्योगिक, राजनीतिक और क़ानून की व्यवस्था की उत्तरोत्तर वृद्धि करनी चाहिए और विद्या, नीति, स्वास्थ्य, विज्ञान, कला और अंतर्राष्ट्रीय शांति और एकता की उन्नति करनी चाहिए।

यदि इन बातों का ठीक ठीक ध्यान रक्खा जायगा तो किसी प्रकार की नैतिक त्रुटि की बहुत ही कम संभावना रह जायगी।

ज्ञान-वृद्धि और अध्ययन।

इक्कीस वर्ष की अवस्था से ही मनुष्य का वास्तविक जीवन आरंभ होता है और इस अवस्था में युवकों को बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता होती है। यदि इसमें किसी प्रकार की त्रुटि होगी तो शिक्षा दूषित और अपूर्ण रह जायगी। इसलिए जिन युवकों ने अपनी शिक्षा का शुभ उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया है उन्हें अपनी पढ़ाई जारी रखने में कभी कसर न करनी चाहिए।

(क) उन्हें सब बातों को देखना और सुनना चाहिए। नम्र और सरल रह कर वे प्रत्येक स्थिति और प्रत्येक मनुष्य से बहुत कुछ सीख सकते हैं। उन्नति की इच्छा रख कर वे सर्वोत्तम आचरणों को अपना आदर्श बना सकते हैं, स्वयं सफल होने का दृढ़ विश्वास रख कर दूसरों की अकृतकार्य्यता से वे सचेष्ट हो सकते हैं और अपने उत्तरदायित्व को समझ कर वे अपने विवेक का बहुत ही उचित

उपयोग कर सकते हैं। जीवन में अनेक ऐसे गड्ढे होते हैं जिनमें अज्ञान और अननुभवी लोग प्रायः बहुत बुरी तरह गिर जाते हैं। इसलिए युवकों को उचित है कि वे सब बातों में अपने माता-पिता से भी सम्मति ले लिया करें।

(ख) हमारे जीवन की अपेक्षा विचार और ज्ञान का संसार बहुत बड़ा है। हमसे पहले संसार में असंख्य पीढ़ियाँ हो चुकी हैं और भविष्य में भी होंगी। इस विशाल संसार में प्रवेश करने के लिए हमें अध्ययन से सहायता लेनी चाहिए। अध्ययन की गणना मनुष्य के सबसे बड़े और सर्वोत्तम आनंदों में है। युवकों को अपने धर्म्म के प्रधान प्रधान ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य धर्म्मों के बड़े बड़े ग्रंथ भी अवश्य पढ़ने चाहिएँ। बाइबिल, कुरान, बौद्ध सूत्र, उपनिषद्, पुराण आदि सभी पाठ्य हैं। हाँ, अपने धर्म्म की पुस्तकों को अधिक रुचि और श्रद्धा के साथ पढ़ना चाहिए। इसके अतिरिक्त भिन्न भिन्न देशों की नीति, काव्य, इतिहास, राज्यप्रबंध, समाज, स्त्री-शिक्षा, शिल्प, नाटक, उपन्यास, निबंध आदि सभी विषयों की उत्तमोत्तम पुस्तकों का अध्ययन करना परम आवश्यक और उपयोगी है। ऐसी पुस्तकों की छोटी या बड़ी तालिका अपनी अपनी रुचि के अनुसार अथवा किसी सुयोग्य विद्वान् की सहायता से बनाई जा सकती है। किसी सुयोग्य मनुष्य के लिए बड़े बड़े प्राचीन विद्वानों के गूढ़ विचारों से परिचित होने से बढ़ कर और कोई बात अधिक समाधानकारक नहीं हो सकती।

(ग) प्राचीन काल के बड़े बड़े महात्माओं के विचारों का ज्ञान प्राप्त करके हमें उनसे लाभ उठाना चाहिए। यदि इन उत्तमोत्तम विचारों का हमारे आचरण पर कुछ भी प्रभाव न पड़े तो समझना चाहिए कि ऊँचे आदर्शों में मानुषी प्रकृति बहुत पिछड़ी हुई है। इस प्रकार परिणाम निकालने से बढ़कर और कौन सी बात अधिक शोकजनक हो सकती है?

लेकिन सब दशाओं में केवल पुस्तकें पढ़कर ही उनपर निर्भर रहना भी भारी भूल है। गान-विद्या या चित्रकारी सीखने में केवल पुस्तकों की सहायता से ही कभी सफलता नहीं हो सकती। इन बातों को जानने के लिए किसी सुयोग्य गुरु से नियमित शिक्षा पाने और स्वयं परिश्रमपूर्वक अभ्यास करने की आवश्यकता होती है। केवल पुस्तकें पढ़ने, किसी उदाहरण को देखते रहने अथवा कभी कभी अभ्यास करने से कभी अभीष्ट-सिद्धि नहीं हो सकती।

ठीक यही दशा आचरण की भी है। केवल बड़े बड़े महात्माओं की जीवनियाँ आदि पढ़ने से ही हमारा आचरण पवित्र नहीं हो सकता। उसके लिए हमें स्वयं तद्वत् आचरण करने की आवश्यकता होती है। पर न जाने क्यों मानव जाति ने यह विषय अभी तक यथेष्ट रूप से नहीं जाना है। किसी वैज्ञानिक शिक्षक को अनेक प्रकार की प्रक्रियाएँ और परीक्षाएँ करते देख कर शिष्यों को उन्हें जानकर भी कार्य्यरूप में परिणत करने में बहुत कठिनता होती है। इसी प्रकार उच्च जीवन को भी समझ लीजिए। मारकस आरेलियस कहता है—"मनुष्य को दूसरों की सहायता से नहीं बल्कि अपने बल पर खड़ा होना चाहिए।" महात्मा बुद्ध का उपदेश है—"शुद्ध हृदय और सत्यता से अपना जीवन व्यतीत करो।" क्या इन उपदेशों के अनुसार कार्य्य करने में, वैज्ञानिक प्रक्रिया या कला सीखने की अपेक्षा कम प्राकृतिक कठिनाइयाँ हैं?

तात्पर्य्य यह कि उत्तम आचरण को भी बहुत ही कष्टसाध्य कला समझना चाहिए। इसलिए उच्चतर जीवन पर हमको बहुत अधिक ध्यान रखना चाहिए और अपने आदर्श के समान बनने के लिए हमें उद्योग करना चाहिए। किसी शिल्प या कला की भाँति अपने आचरण सुधारने के लिए हम जितना ही अधिक परिश्रम करेंगे उतनी ही अधिक हम सफलता भी प्राप्त करेंगे और जितना ही हम लोग उसकी ओर से उदासीन रहेंगे उतनी ही हमें अकृतकार्य्यता भी होगी।

नए जीवन में प्रवेश करनेवाले युवकों से हम यही कहेंगे—"जीवन एक ललित कला है; यदि अन्य उत्तम कलाओं की भाँति इसके लिए भी तुम उतना ही परिश्रम करोगे तो तुम्हें अवश्य सफलता होगी।" अपनी इच्छा-शक्ति को अपने मनोदेवता के आज्ञानुसार कार्य्य करने के योग्य बनाओ। जब तक तुम पवित्र हृदय, सच्चे पराक्रमी, उदार विचारशील और दूसरों से सहानुभूति करनेवाले न बन जाओ तब तक बराबर उद्योग करते चलो। ऐसी दशा में तुम सज्जनता में भी उतने ही पारंगत हो जाओगे जितने कि चित्र या गान-विद्या अथवा किसी अन्य कला में।

जो युवक अपने नैतिक आचरण को आदर्श बनाना चाहते हों उन्हें इस प्रकार के उद्योग में कभी त्रुटि न करनी चाहिए। जितना परिश्रम शिल्पकार या कलाकुशल होने में करना पड़ता है उतना ही आदर्श-चरित होने में भी। आदर्श जीवन बिताने के लिए वास्तविक कार्य्य करने की आवश्यकता है, कोरे लंबे चौड़े विचारों की नहीं।

नैतिक शिक्षा में विचार, अनुभव, अध्ययन और उत्तम कर्म्म करने की आवश्यकता होती है; और इन्हीं बातों की आवश्यकता समान रूप से ज्ञान-संबंधी शिक्षा के लिए भी होती है।

परिशिष्ट।

शिक्षा-संबंधी कार्य्यों में हमारे लिए दो मार्ग हैं। या तो हम केवल विचार करनेवाले बन जायँ और या केवल जबानी बातें करने में वीर हो जायँ। हमें विश्वास है कि हमारे पाठक वाक्-वीर होने की अपेक्षा विचारवान् होना अधिक पसंद करेंगे। वाक्-वीर बातें तो बहुत सी कर जायँगे पर उनके किए काम कुछ भी न होगा। किसी मनुष्य के लिए केवल ओषधियों के आधार पर जीवित रहना असंभव है। पर इसके विरुद्ध जो मनुष्य स्वयं उत्तम आदर्श उपस्थित करता है वही भली भाँति अपना पक्ष भी समर्थन कर सकता है। वह दूसरों के समान उच्च आदर्श उपस्थित करता है, लोगों को यह सिखलाता है कि बहुत से लोग ऐसे हैं जो भली भाँति उन उच्च आदर्शों का अनुकरण कर सकते हैं और तीसरे यह कि जो मनुष्य उसके लिए निरंतर कठिन परिश्रम करता है उसे बहुत अच्छा अध्यात्मिक फल भी अवश्य मिलता है। इसके अतिरिक्त जिन लोगों की परिस्थिति ठीक नहीं होती वे भी उससे कुछ न कुछ सीख कर लाभ उठा सकते हैं।

दुर्भाग्यवश गृहस्थी में एक ही जीव को स्त्री, पत्नी, माता, दासी, दाई और शिक्षिका बनना पड़ता है, गृहस्थी का सब काम करना पड़ता है और दोनों समय भोजन आदि पकाना और बाल बच्चों को देखना रहता है। प्रायः ऐसी दशा में उनके लिए उत्तम शिक्षा असंभव हो जाती है। इसलिए शिक्षा-प्रचार के साथ ही साथ जन-साधारण की दरिद्रता और सामाजिक कुरीतियाँ दूर करना भी हमारा कर्तव्य हो जाता है। यदि आदर्श की सीमा घटाकर समाज की स्थिति के अनुकूल कर दी जाय तो भी काम नहीं चल सकता। इस क्रिया से समाज की उन्नति के बदले अवनति होने लगेगी। अतः जो मनुष्य शिक्षा प्रचार का काम करना चाहता हो उसे सामाजिक दोष और दरिद्रता दूर करने का भी प्रयत्न करना चाहिए।

किसी बड़ी से बड़ी पुस्तक में भी जीवन या शिक्षा-संबंधी सभी छोटी बड़ी बातों का कदापि पूरा पूरा समावेश नहीं हो सकता। इसलिए जब तक माता-पिता स्वयं समझ बूझ कर और सहानुभूति सहित बालकों को इस पुस्तक में प्रकट किए हुए विचार भली भाँति न बतलावें तब तक इसका भी कोई फल नहीं हो सकता। लेखक आशा करता है कि इस लेख में उसने जो आकारहीन बीज बोए हैं उनसे अभिभावकों के सहानुभूतिपूर्ण हृदय में बड़े बड़े वृक्ष उत्पन्न होंगे जिनमें सुन्दर फूल और सुस्वादु फल लगेंगे। एवमस्तु।

—:o:—

जम्बू-राजवंश ।

(गतांक से आगे ।)

अँगरेजों की ओर से फ्रेडरिक करी साहब तथा मेजर हेनरी मांटगोमरी लारेंस ने महाराज गुलाबसिंह के साथ जो संधि की थी वह इस प्रकार थीः—

(१) ९ मार्च १८४६ वाली लाहौर की संधि की चौथी धारा के अनुसार लाहौर राज्य से अँगरेजों को मिली हुई अमलदारी के अंतर्गत लाहौर प्रांत को छोड़ कर, सिंधु नदी के पूरब और रावी नदी के पश्चिम का कुल पहाड़ी प्रांत और उसके अधीनस्थ देश चंबा सहित अँगरेज सरकार सदा के लिए महाराज गुलाबसिंह और उनके पुरुष उत्तराधिकारियों को दे देती है ।

(२) पहली धारा के अनुसार गुलाबसिंह को दिए हुए प्रांत की पूर्वी सीमा अँगरेज सरकार और महाराज गुलाबसिंह के नियुक्त किए हुए कमिश्नरों द्वारा निर्द्धारित होगी और उसका निश्चय और निर्द्धारण बंदोबस्त के बाद किया जायगा ।

(३) उक्त धाराओं के अनुसार महाराज गुलाबसिंह और उनके पुरुष उत्तराधिकारियों को जो कुछ दिया गया है उसके बदले में अँगरेज सरकार को महाराज गुलाबसिंह ७५ लाख नानकशाही रुपये देंगे; जिनमें से ५० लाख रुपये तो इस संधि के होते ही और शेष २५ लाख रुपये आगामी १ अक्तूबर सन् १८४६ तक वे दे देंगे ।

(४) महाराज गुलाबसिंह की अमलदारी की सीमा में कभी कोई परिवर्त्तन बिना अँगरेज सरकार की सहमति के न होगा ।

(५) यदि लाहौर सरकार या किसी दूसरे पड़ोसी राज्य के साथ महाराज गुलाबसिंह का किसी प्रकार का झगड़ा खड़ा होगा तो वे उसका निर्णय अँगरेज सरकार से करावेंगे और अँगरेज सरकार का किया हुआ निर्णय ही स्वीकार करेंगे ।

(६) यदि महाराज गुलाबसिंह की सीमा के अंदर या आस पास अँगरेजी सेना कभी लड़ने जायगी तो महाराज और उनके उत्तराधिकारी अपनी पूरी सैनिक शक्ति सहित उसमें सम्मिलित होंगे ।

(७) महाराज गुलाबसिंह बिना अँगरेजी सरकार की स्वीकृति के कभी किसी अँगरेजी प्रजा या किसी यूरोपियन या अमेरिकन राज्य की प्रजा को अपने यहाँ नौकर न रक्खेंगे ।

(८) ११ मार्च सन् १८४६ को अँगरेज सरकार और लाहौर दरबार में जो अलग संधि हुई है उसकी ५ वीं, ६ ठी और ७ वीं धाराओं की बातों का अपनी पाई हुई अमलदारी के संबंध में महाराज गुलाबसिंह सदा पालन करेंगे ।

(९) बाहरी शत्रुओं से उनकी अमलदारी की रक्षा करने में अँगरेज सरकार सदा महाराज गुलाबसिंह को सहायता देगी ।

(१०) अँगरेजी सरकार की अधीनता महाराज गुलाबसिंह स्वीकार करते हैं और स्वीकृति के बदले में वह अँगरेजी सरकार को प्रतिवर्ष एक घोड़ा, बढ़िया पसंद की हुई जाति के पूरे शालवाले बारह बकरे और शाल की तीन जोड़ियाँ देंगे ।

दस धाराओंवाली यह संधि आज राइट आनरेबुल सर हेनरी हार्डिंज जी० सी० बी० गवर्नर जनरल के आज्ञानुसार फ्रेडरिक करी महाशय तथा ब्रेवेट मेजर हेनरी मांटगोमरी लारेंस और स्वयं महाराज गुलाबसिंह में हुई है; और आज राइट आनरेबुल सर हेनरी हार्डिंज जी० सी० बी० गवर्नर जनरल की मोहर होकर सकारी गई है ।

अमृतसर में १६ मार्च १८४६ मुताबिक १७ रबी-उल—अवल १२६२ हिजरी को लिखी गई ।

(ह०) एच० हार्डिंज (मोहर) एफ० करी । एच० एम० लारेंस ।

उसी अवसर पर बड़े लाट ने अपने बाल-बच्चों को सैर करने के लिए काशमीर भेजा और महाराज गुलाबसिंह से सब प्रकार उनका पूरा पूरा ध्यान रखने के लिए कहा । गुलाबसिंह उन लोगों को साथ

लेकर उसी दिन जसरौटा के लिए रवाना हुए। वहाँ पहुँच कर उन्होंने दीवान हरीचंद को सिक्ख तथा दूसरी सेनाओं के साथ हजारा जिला विजय करने के लिए भेजा। इसके बाद ही काशमीर में भी कुछ आंतरिक उपद्रव उठे जिनकी शांति अँगरेजी सेना की सहायता से की गई। हजारा प्रांत के जमींदार बड़े उद्दंड थे इसलिए महाराज गुलाबसिंह वह जिला देकर मनावर और धारी प्रांत जो कि पंजाब सरकार की ओर से मेजर अबोट की अधीनता में थे, लेना चहते थे। ५ मई सन् १८४७ को एक सनद के द्वारा वे दोनों जिले महाराज गुलाबसिंह को मिल गए और उन्होंने हजारा जिला पंजाब सरकार को दे दिया।

सन् १८४८ के आरंभ में एमरटन और एंडरसन नामक दो अँगरेज मुलतान गए थे; वहाँ उन्हें मूलराज के सैनिकों ने मार डाला। अतः मुलतान विजय करने के लिए कुछ खालसा सेना के साथ सरदार शेरसिंह अटारीवाले और मेजर एडवर्ड भेजे गए जिन्होंने जाकर सूरजकुंड में छावनी डाली। हजारा जिले के तत्कालीन अधिकारी सरदार छतरसिंह अटारीवाले ने अफगानिस्तान के अमीर दोस्त मुहम्मदखाँ से मित्रता कर ली थी और उन दोनों ने मिलकर पंजाब विजय करने का विचार किया था। अतः उनपर आक्रमण करने के लिए लार्ड गफ की अधीनता में अँगरेजी सेना भेजी गई जिसने सिक्खों के बहुत वीरतापूर्वक लड़ने पर भी रामनगर और चिलियानवाला में उन्हें परास्त किया। प्रायः उसी समय मुलतान भी जीत लिया गया था और महाराज गुलाबसिंह की कुमक पाकर अँगरेजों ने गुजरात में सिक्खों को मार भगाया था। इसके उपरांत खालसा सेना ने भी रावलपिंडी में अधीनता स्वीकार कर ली और पंजाब में शांति स्थापित हो गई।

सिक्खों के राजत्त्वकाल में मुलतान का शासन और प्रबंध दीवान सावनमल के हाथ में था। जब दीवान सावनमल एक हत्यारे के हाथ से निहत हो गए तो उनके चिरंजीव दीवान मूलराज उनके उत्तराधिकारी हुए। एक बार दीवान मूलराज नियमित राजस्व न दे सके और लाहौर दरबार में इसकी सूचना सर जान लारेंस को दी। खालसा शक्ति का अंत हो जाने पर सर लारेंस लाहौर के रेसिडेंट नियुक्त हुए थे अतः उन्होंने दीवान मूलराज को लाहौर बुलवा भेजा और उनपर बहाने से उनके प्रांत में उपद्रव होने का अभियोग लगाया; इसके सिवा उन्होंने यह भी कहा कि तुम्हारे और भाई तुम्हारा पद लेने के प्रयत्न में लगे हैं। सर लारेंस ने यह भी कहा कि यदि अँगरेज सरकार के अधिकारी मुलतान जाकर इन झगड़ों को तै कर दें तो बहुत ही अच्छा होगा और इसके उपरांत बाकी राजस्व दे देने पर सब प्रकार के उत्तरदायित्व से आपकी मुक्ति हो जायगी। पर पीछे कुछ सोच समझ कर सर लारेंस ने इस मामले को मुलतवी कर दिया और मूलराज लौटकर मुलतान चले गए। सर लारेंस के बाद जब सर फ्रेडरिक करी लाहौर के रेसिडेंट के पद पर नियुक्त हुए तो उन्होंने सरदार कान्हसिंह मान के साथ, जो मुलतान के सूबेदार मूलराज पर विजय प्राप्त करने के लिए नियुक्त हुए थे, मि० एमरटन और मि० एंडरसन को भी भेज दिया। जब इन अधिकारियों ने मूलराज से भेंट करके उनसे किले की कुंजियाँ और प्रान्त का अधिकार माँगा तो उन्होंने सबको साफ और कड़ा जवाब दिया। वहाँसे लौटकर जब वे ईदगाह में अपने डेरे पर आए तो वहाँ कुछ दुष्टों ने मि० एमरटन के कलेजे में बरछा भोंक कर और मि० एण्डर्सन की तलवार से हत्या कर दी। इस पर बड़ा उपद्रव मचा और युद्ध की तैयारियाँ होने लगीं। निहत अफसरों के साथी सिक्ख सिपाही मूलराज की सेना में मिल गए और सरदार कान्हसिंह उनके बंदी हो गए। जब सर फ्रेडरिक करी को यह बातें मालूम हुईं तो उन्होंने सरदार शेरसिंह की अधीनता में कुछ सिक्ख सेना मुल्तान की ओर भेजी। बहावलपुर के नवाब तथा मेजर सर हरबर्ट एडवर्ड्स की सेना भी बन्नू से आकर उसमें

मिल गई। जब इतनी सेनाएँ मिलकर भी मुलतान के किले पर अधिकार न कर सकीं ता अन्त में बंबई से अँगरेजी सेना मँगानी पड़ी; तब कहीं जाकर मुलतान के किले पर अधिकार हुआ। उस अवसर पर सरदार छतरसिंह अटारीवाले ने भी, जो लाहौर सरकार की ओर से हजारा प्रांत का प्रबन्ध करने के लिए भेजे गए थे, विप्लव करने का विचार किया। इस विचार का कारण यह कहा जाता है कि उनकी अधीनस्थ सेना ने खालसा सरकार के एक अँगरेज अफसर को मार डाला था और इसलिए सरदार छतरसिंह को स्वयं अपने कुशल क्षेम में संदेह था। सर फ्रेडरिक करी ने राजा दीनानाथ को उन्हें समझाने के लिए भी भेजा। पर उसका कुछ फल न हुआ। सरदार छतरसिंह ने कई पत्र भेज कर अपने पुत्र शेरसिंह को मूलराज की सेना में सम्मिलित होने की आज्ञा दी जिसका पालन भी हुआ। छतरसिंह स्वयं विप्लव की तैयारियां करने लगे। उस समय सिक्खों को यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि वे सरकारी अमलदारी को उठा देंगे और इसी लिए चारों ओर से बहुत से सिक्ख आकर उनसे मिल गए और गाँव देहातों में लूट पाट करने लगे। शाहदरे के निकट रावी पर का राजघाटवाला पुल भी उन्होंने जला दिया। मृत हरीसिंह के पुत्र अर्जुनसिंह के अधीन गुजरानवाले तक का प्रांत था। उधर दूसरी ओर नूरपुर में रामसिंह विद्रोह के प्रयत्न कर रहा था। पेशावर पहुँचकर छतरसिंह ने खालसा सेना को रावलपिंडी भेजा। उसी अवसर पर मि॰ लारेंस और मि॰ बाइड जिन्हें तारीखे-सुलतानी के रचयिता सरदार सुलतान मुहम्मदखाँ बासकजाई ने गिरिफ़्तार किया था, उनके पास भेजे गए। अफगानिस्तान के अमीर दोस्त मुहम्मदखाँ भी छतरसिंह की सहायता के लिए आ गए और काशमीर, हजारा, रावलपिंडी और झेलम तक का प्रांत जीतने का विचार करने लगे। अटक का किला जिसे छतरसिंह ने अमीर की सहायता से ही लिया था, फिर उनके हवाले कर दिया गया।

पहले छतरसिंह और गुलाबसिंह में भी बड़ी मित्रता थी, इसलिए छतरसिंह ने अपना दूत श्रीनगर भेजकर गुलाबसिंह से इस युद्ध में सम्मिलित होने के लिए कहा और स्वयं उन्हीं को पंजाब का शासक बनाने का भी लालच दिलाया। पर महाराज गुलाबसिंह ने उनकी बात स्वीकार नहीं की और उलटे उन्हीं को अँगरेजों से क्षमा-प्रार्थना करने की सम्मति दी। उन्होंने छतरसिंह को यह भी स्मरण दिलाया कि महाराज रणजीतसिंह प्रायः कहा करते थे कि जो अँगरेजों का विरोध करता है वह स्वयं अपनाही नाश करता है। छतरसिंह का दूत बख्शी हीरानन्द श्रीनगर में नजरबन्द कर लिया गया और अमीर दोस्त मुहम्मद-खाँ का जो दूत पत्र और नजर के लिए घोड़े और फारस की तलवारें लेकर गुलाबसिंह से सहायता माँगने आया था, वह श्रीनगर के बाहर से ही खाली लौटा दिया गया। गुलाबसिंह ने पहले ही हजारा प्रांत का विद्रोह शांत करने के लिए अँगरेजी सेना के साथ वहाँ स्वयं जाने की इच्छा प्रकट की थी। सर फ्रेडरिक ने पहले तो उनके पत्र का उत्तर ही न दिया और पीछे उन्हें केवल यही आज्ञा दी कि बलवाइयों को पहाड़ी जिलों में घुसने से रोको। इस पर उन्होंने दीवान हरीचन्द को जम्बू से मना-वर भेज दिया और सैय्यद गुलामअली शाह और जोरावरसिंह की अधीनता में कुछ सेना रामसिंह के मुकाबिले के लिए भेज दी गई। जालन्धर के तत्कालीन कमिश्नर सर जान लारेंस की आज्ञा और सम्मति से इस सेना ने बहुत अच्छा काम किया। उधर मेजर हेरिसन की अधीनता में नूर मुहम्मद की सेना ने भी बड़ी सहायता दी। महा-राज गुलाबसिंह ने आज्ञा दे दी थी कि जम्बू से यदि कोई जाकर विद्रोहियों में सम्मलित होगा तो उसके संबन्धी कैद कर लिए जायँगे और उनकी जायदाद जब्त हो जायगी। इस अवसर पर अँग-रेजी सेना जेनरल निकलसन की अधीनता में राम-नगर में पड़ी हुई थी और सिक्ख सेना ने चनाब

नदी पार करके वजीराबाद के निकट डेरा डाला हुआ था। सिक्खों की कुछ पलटनें जो उस समय जम्बू में थीं, वजीराबाद जाकर अपनी सेना में सम्मिलित होना चाहती थीं। पर जम्बू सरकार ने पहले ही धोखे में उनके हथियार रखवा लिए थे। जब वह पलटनें बलपूर्वक अपने हथियार ले लेने पर उतारू हुईं तो व्रजराज की पलटन द्वारा उनका दमन कराया गया। उसी अवसर पर बहुत वीरता-पूर्वक कार्य्य करने के कारण धर्म्मसिंह कर्नल बना दिया गया था।

जिस समय महाराज गुलाबसिंह श्रीनगर में थे उस समय रणवीरसिंह ने जम्बू प्रांत का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था। पर बाकी सारे पंजाब में बहुत उपद्रव मचा हुआ था। अमीर दोस्त मुहम्मद-ख़ाँ सिक्ख सेना में मिल गए थे; उधर मेजर एबट ने हजारा प्रांत छोड़कर मारकोट नामक गाँव में शरण ली थी। गुलाबसिंह ने उस अवसर पर कुछ विश्वसनीय व्यापारियों के हाथ चमड़े के थैलों में भर कर बहुत सी रकम और गोली बारूद मेजर साहब के पास भेजी थी। काजी नादिरअलीख़ाँ भी उनकी सेवा और सहायता के लिए उनके पास भेज दिए गए थे। इसी प्रकार महाराज ने अपने एक प्रधान को लाहौर में सर फ्रेडरिक करी के पास भी भेज दिया था।

जिस समय अँगरेजी सेना मुलतान को घेर रही थी, पिता छतरसिंह की आज्ञा पाकर सरदार शेरसिंह अँगरेजी सेना से बचने के लिए मुलतान से चल पड़े और विद्रोहियों के साथ मिलकर उन्होंने रामनगर में जनरल निकलसन का मुकाबला किया। जनरल की सेना चनाब नदी पार करके सवेरे ही उनके सिर पर पहुँच गई थी। उस युद्ध में शेरसिंह की सेना बहुत वीरतापूर्वक लड़ने पर भी हार गई। दूसरी लड़ाई चिलियानवाला में हुई जिसमें कमांडर-इन-चीफ लार्ड गफ भी उपस्थित थे। यद्यपि उस अवसर पर अँगरेजी तोपखाने ने खूब गोले बरसाए; पर सिक्खों ने बिना उनकी परवा किए दिन भर लड़ाई जारी रक्खी। संध्या समय अँगरेजी सेना तो युद्ध स्थल में ही रह गई और खालसा सेना वहाँ से दो कोस चलकर रसूल नामक मौजे में पहुँची; पर वहाँ उसे रसद आदि मिलने में बहुत कठिनता हुई। गुजरात में उसे रसद बहुत मिलती थी इसलिए वह वहाँ से चल कर गुजरात पहुँची। अँगरेजी सेना उस समय सिक्खों पर अंतिम धावा करना चाहती थी इसलिए कर्नल लारेंस ने जम्बू और काशमीर के सब रास्तों पर पहरे का प्रबंध कर दिया, उक्त प्रांतों में प्रवेश करने-वाले सिक्खों के हथियार रखाए जाने लगे और मनावर, मिंबर, मीरपुर तथा अन्य पहाड़ी नगरों में सेना की टुकड़ियों की छावनी पड़ गई। महाराज गुलाबसिंह का ताहिरखाँ नामक एक वकील सदा मेजर मैकिंसन के पास रहता था और अँगरेज अफसरों की आज्ञाएं दीवान हरीचंद के पास भेज देता था। दीवान साहब उस समय थोड़ी सी सेना सहित मीरपुर में ठहरे हुए थे और वहीं से सारी अँग-रेजी सेनाओं को रसद भेजते थे। अंत में गुजरात का प्रसिद्ध घोर युद्ध हुआ। अँगरेजी तोपखाने ने पहले गोले बरसाने आरंभ किए। उधर सरदार छतरसिंह ने अँगरेजी सेना के एक पक्ष पर और शेरसिंह ने दूसरे पक्ष पर आक्रमण किया। उसी स्थल पर रामसिंह छापेवाले ने वीरतापूर्वक लड़कर अपने प्राण त्यागे थे। जब अंत में सिक्ख परास्त हो गए तो उन्होंने भिन्न भिन्न स्थानों में जाकर गुलाबसिंह के कर्म्म-चारियों के पास शरण ली; वहाँ उनके हथियार रखवा लिये गए थे और घोड़े हाथी आदि छीन लिये गए थे। कुछ सिक्ख सांगला के पास पकड़े गए थे और वहीं उनसे अँगरेजों ने हथियार रखवा लिये थे। इस प्रकार धीरे धीरे छतरसिंह और शेरसिंह के अधीनस्थ सारे सिक्खों ने हथियार रख दिए और सारे पंजाब में शांति हो गई। अंत में कर्नल सर हेनरी लारेंस की सम्मति से मि० (सर हेनरी) ईलियट (सरकारी परराष्ट्र-विभाग के प्रधान मंत्री) ने लाहौर के किले में एक बड़ा दरबार किया। महाराज दलीपसिंह अपने सरदारों सहित उसी

किले में रहते थे। पंजाब प्रांत के अँगरेजी अमलदारी में मिला लिये जाने की घोषणा की गई ग्रैार दलीपसिंह गद्दी से उतार दिए गए। कुछ दिनों बाद बड़े लाट लार्ड डैलहैाज़ी लाहौर गए ग्रैार वहाँ से उन्होंने दलीपसिंह के कराची भेज दिया। उस अवसर पर गुलाबसिंह जम्बू में ही थे ग्रैार उनसे बड़े लाट से भेंट नहीं हुई थी। पीछे जब लार्ड नेपियर कमांडर-इन-चीफ होकर आए तो सर जान लारेंस जम्बू से गुलाबसिंह के स्यालकोट ले गए ग्रैार वहाँ कमांडर-इन-चीफ से उनकी भेंट हुई।

सन् १८५० में महाराज गुलाबसिंह रामपुर होते हुए काश्मीर गए ग्रैार एक दूसरे मार्ग से लेडी मांटगोमरी, सर हेनरी लारेंस ग्रैार कप्तान हडसन आदि भी वहाँ पहुँचे। उन लोगों का स्वागत आदि वहाँ बहुत अच्छी तरह से हुआ था। उन के ठहरने का प्रबंध कोठी बाग में किया गया था ग्रैार स्वयं महाराज गुलाबसिंह भी उनके साथ बराबर वहीं रहे थे। उसी अवसर पर मियाँ प्रतापसिंह (जम्बू के वर्त्तमान महाराज) का जन्म हुआ था जिसके कारण सब स्थानों पर बहुत आनंद मनाया गया था। इसके उपरांत रणवीरसिंह, जवाहिरसिंह, मोतीसिंह तथा अन्य अनेक सरदारों के साथ महाराज गुलाबसिंह वज़ीराबाद गए। जब वे सुचेतगढ़ तक पहुँचे तो वज़ीराबाद के डिप्टी कमिश्नर मि० जान इंगलिस तथा मि० प्रिन्सेप ने उनका स्वागत किया ग्रैार उनके छावनी में पहुँचने पर अँगरेजी तोपखाने ने सलामी सर की। वज़ीराबाद की छावनी में भी महाराज का स्वागत बहुत धूमधाम से हुआ ग्रैार अनेक अफसर आकर उनसे मिले ग्रैार उन्हें अपने साथ उनके ठहरने के स्थान तक ले गए। पहले तो दो दिन तक लार्ड डेलहैासी के साथ उनकी भेंट न हो सकी ग्रैार लाट साहब ने अपने सेक्रेटरी द्वारा कहला दिया कि हमारे पैर में फोड़ा निकला है। अंत में गुलाबसिंह स्वयं उनके खेमे तक गए। वहाँ सेना ने सलामी सर की ग्रैार लाट साहब ने स्वयं आगे बढ़ कर उनका स्वागत किया ग्रैार उनसे हाथ मिला कर उन्हें अपनी दाहिनी ग्रोर बैठाया। इसके उपरांत तोपखाने से फिर सलामी सर हुई ग्रैार बड़े लाट लोगों के खिलअतें आदि देने लगे। रणवीरसिंह को एक भारी खिलअत ग्रैार महारानी विक्टोरिया की तसवीर जड़ी हुई एक अँगूठी मिली थी। इसी प्रकार दीवान हरीचंद तथा अन्य सरदारों को भी खिलअत ग्रैार भेंट मिली थी। दूसरे दिन महाराज गुलाबसिंह से मिलने के लिये बड़े लाट उनके डेरे पर गए। महाराज ने आधे रास्ते तक आकर उनका स्वागत किया। उस अवसर पर महाराज की ग्रोर से बहुत से बहुमुल्य पदार्थ ग्रैार घोड़े आदि लोगों को उपहार स्वरूप दिए गए थे। दूसरे दिन सेनाग्रों का निरीक्षण हुआ ग्रैार तदुपरांत महाराज गुलाबसिंह बिदा होकर जम्बू चले गए।

उसी वर्ष (सन् १८५०) में दारदू जाति के लोगों ने जो काश्मीर की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर बसते थे ग्रैार जिन्होंने चिलास का सुदृढ़ पहाड़ी किला अपने अधिकार में कर लिया था, कुछ उत्पात किया ग्रैार गुलाबसिंह के अधिकृत आस पास की बस्तियों को लूट लिया। बहुत अधिक जाड़ा पड़ने के कारण शीतकाल में तो उनका कोई प्रबन्ध न हो सका; पर वसन्त ऋतु में महाराज ने वज़ीर जोरावर, कर्नल विजयसिंह, कर्नल जवाहिरसिंह, पूजनसिंह ग्रैार दीवान ठाकुरदास तथा बहुत बड़ी सेना ग्रैार दूसरे अफसरों सहित दीवान हरीचंद को उस किले पर आक्रमण करने के लिये भेजा। वह किला बहुत ऊँचे स्थान पर था। तथापि महाराज की सेना इस आशा से उसे कुछ समय तक घेरे रही कि रसद आदि का अभाव होने पर किलेवाले आत्मसमर्पण कर देंगे; पर इसमें उन्हें सफलता नहीं हुई। महाराज की सेना की रसद आदि का प्रबन्ध भी ठीक नहीं था ग्रैार न उन्हें आस पास के किसी स्थान से ही रसद मिलती थी। उधर किले में से रात के समय तो पुरुष गोलियाँ बरसाते थे ग्रैार दिन के समय स्त्रियाँ बन्दूकें चलाती थीं। कर्नल

देवीसिंह के अधीनस्थ सैनिकों ने संगल नामक स्थान पर एक बाड़ा बनाया था, पर रात के समय आस पास के निवासियों ने आक्रमण किया और कर्नल की जान बड़ी कठिनता से बची। महाराज की सेना हल्ला करके किला सर करना चाहती थी पर उनके पास चढ़ने की सीढ़ियाँ बहुत ही छोटी थीं। किलेवाले गोले और गोलियाँ बरसाने के सिवा ऊपर से पत्थर भी लुढ़काते थे जिससे महाराज की सेना के १५०० आदमी जिनमें कई बहादुर अफसर भी थे, मारे जा चुके थे। इतना सब कुछ होने पर भी घेरनेवाले हताश नहीं हुए और बराबर पेड़ों की पत्तियाँ और कन्द मूल आदि खाकर गुजारा करने लगे। इसी बीच में बहुमूत्र रोग से पीड़ित होने के कारण गुलाबसिंह का स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया था। रणवीरसिंह उन दिनों सोपुर में रहते थे और उसी प्रांत का प्रबन्ध करते थे। उधर घेरा डालनेवालों को किसी तरह यह मालूम हो गया कि यदि किसी प्रकार किलेवाले जल पाने से वंचित किये जा सकें तो वे बहुत शीघ्र आत्मसमर्पण कर देंगे। अतः उन लोगों ने एक बड़ी सुरंग खोद कर किले के अन्दरवाले एकमात्र तालाब का पानी बाहर निकाल लिया। किलेवाले तीन दिन तक केवल तेल पीकर रहे और तब अन्त में वे लोग किले में आग लगा कर बाहर निकल कर भागने लगे। भागते समय बहुत से लोग मारे और कैद किए गए। महाराज के कई जिलों के अधिकारियों और अफसरों को किलेवालों ने कैद कर लिया था; उन कैदियों को वे अपने साथ ही लेते गए। पीछे उन अफसरों से कर देने की प्रतिज्ञा कराकर और उनके लड़कों को ओल में रख कर उन्हें छोड़ दिया गया।

ऊपर कहा जा चुका है कि इस युद्ध के समय गुलाबसिंह बीमार थे। बीमारी की दशा में जब उन्होंने सुना कि उनकी सेना को रसद नहीं मिल रही है तो उन्होंने स्वयं युद्ध स्थल तक जाने का विचार किया। उनके दरबारियों ने उन्हें उस अवस्था में यात्रा करने से रोका और उनमें से कुछ ने स्वयं वहाँ जाकर रसद आदि का प्रबन्ध करने का भार अपने ऊपर लेना चाहा। अतः महाराज ने दीवान निहालचन्द तथा पं० राजा खाक को इस सेवा पर नियुक्त करके वहाँ भेजा। इसी अवसर पर प्रसिद्ध ज्योतिषी ब्रजलाल ने महाराज से यह भी कहा था कि अब तक आपके सेवकों ने या तो किला जीत लिया होगा या दो एक दिन में अवश्य जीत लेंगे और किले के अन्दर उन्हें बहुत सी रसद मिलेगी। उस समय तो महाराज को ज्योतिषी की बात पर विश्वास नहीं हुआ था; पर पीछे जब उन्हें मालूम हुआ कि ज्योतिषी की भविष्यद्वाणी बिलकुल सत्य उतरी थी तो उन्होंने उसे बहुत सा पुरस्कार दिया था।

स्वास्थ्य कुछ ठीक होने पर गुलाबसिंह श्रीनगर से जम्बू चले गए। जम्बू के निकट पहुँचते ही राजा जवाहिरसिंह की शिकायत करने के लिए राजा मोतीसिंह उनके पास पहुँचे। जवाहिरसिंह और मोतीसिंह दोनों ही राजा और भाई थे और उनका झगड़ा वहाँ तै नहीं हो सकता था इस वास्ते वे लोग अँगरेज अधिकारियों के पास लाहौर भेज दिए गए। जम्बू से गुलाबसिंह उत्तर की ओर थोड़ी दूर पर रियासी नामक स्थान में चले गए। वहाँ पहुँचने पर उन्हें मालूम हुआ कि गिलगित्त के थानेदार सन्तोषसिंह विद्रोहियों और नगरी के राजा की झूठी बातों में आकर किले से अपनी सेना सहित बाहर निकल आए थे और विद्रोहियों द्वारा मारे गए। पर मनावर किले के अधिकारी देवीदास ने वीरतापूर्वक शत्रुओं का सामना किया था; पर अन्त में वह भी विद्रोहियों द्वारा जिनकी संख्या ४००० से अधिक थी मारे गए। स्त्रियों को शत्रुओं के अत्याचार के भय से देवीदास ने पहले ही मरवा डाला था और अन्त में वीरतापूर्वक लड़कर उन्होंने अपने प्राण दिये थे। पुरी के किलेदार भूपसिंह की भी वही दशा हुई थी। किले में रसद न होने के कारण उन्हें विवश होकर बाहर निकलना पड़ा था। नगरी का राजा

यद्यपि पहले इस बात की कसम खा चुका था कि वह किलेवालों के प्राण नहीं लेगा पर उन लोगों के बाहर निकलते ही उसने छलपूर्वक सबों के मार डाला था। विद्रोहियों का सरदार गौहर रहमान था जिसने गिलगित्त विजय किया था और पकड़े हुए कैदियों के दास बना कर बेच दिया था। आगे चल कर इसका भी दमन हे गया था।

ठीक ऐसे अवसर पर जब कि गुलाबसिंह की सेना अपने राज्य के भीतरी उपद्रवों की शान्ति में लगी हुई थी, महाराज को कर्नल लारेन्स का भेजा हुआ एक खरीता इस आशय का मिला कि हजारा जिले के विद्रोहियों ने फिर उपद्रव आरंभ किया है इसलिए वहाँ की शान्ति के लिए तुरंत कुछ सेना भेजो। इस पर उन्होंने चार रेजिमेंटें भेज दीं जिन्होंने वहाँ जाकर प्रशंसनीय कार्य्य किया। उधर जवाहिर-सिंह के कुछ लोगों ने यह कह कर भड़काया कि अँगरेज अधिकारियों ने राजा हीरासिंह का अधिकृत जसरौटा प्रांत ते आपके दिया ही पर किसी और प्रकार से आपकी जागीर नहीं बढ़ाई; इसलिए आपका लाहौर जाना बिलकुल व्यर्थ ही हुआ। गुलाबसिंह के मैालवी मजहर अली नामक एक सेवक ने ते उसे गुलाबसिंह की आधी अमलदारी ले लेने के लिए ही उत्तेजित किया। इन षड्यंत्रों के कारण अंत में अँगरेजों द्वारा मैालवी उस समय गिरिफ़्तार कर लिया गया जब कि वह पेशावर में स्वात प्रांत के लिए सेना संग्रह कर रहा था। जवाहिरसिंह फिर इस आशा से सर जान लारेन्स के पास लाहौर गए कि वह उन्हें गुलाबसिंह के अधीन न रखकर स्वतंत्र बना देंगे पर इसमें भी उन्हें सफलता नहीं हुई। इसके बाद उन्होंने गुलाबसिंह से लड़ने की भी तैयारियाँ की थीं पर गुलाबसिंह पहले से ही सचेष्ट हे गए थे इसलिए कोई लड़ाई झगड़ा नहीं हुआ।

महाराज गुलाबसिंह जब पहले एक बार बहुत बीमार हुए थे ते उन्होंने कर्नल लारेन्स पर अपना सारा राज्य रणबीरसिंह के दे देने की इच्छा प्रकट की थी और कर्नल महाशय ने भी यह बात स्वीकार कर ली थी। तदनुसार सम्वत् १९१२ के ६ ठे फागुन के (सन् १८५५) महाराज गुलाबसिंह ने अपने दत्तक पुत्र रणबीरसिंह के अपने राज्यासन पर बैठाया और स्वयं अपने हाथ से उन्हें केसर का तिलक लगाया। यह उत्सव मंडी में हुआ था और उसमें स्यालकोट छावनी के सब अफसर भी निमंत्रित किए गए थे। इसके बाद एक दरबार भी हुआ था जिसमें सब सरदार आदि उपस्थित थे। रणवीरसिंह के राज्याधिकार देकर महाराज गुलाबसिंह ने सब प्रकार के सांसारिक कार्य्य छोड़ दिए और काशमीर की ओर प्रस्थान किया। वहाँ उन्हें गठिया हे गई थी। एक दिन स्नान करते समय उनकी तबियत बहुत खराब हे गई। यह समाचार सुनकर रण-वीरसिंह तुरंत जम्बू से चल पड़े। उस अवसर पर मेरठ और दिल्ली में देशी पलटनों ने अँगरेजों के मार डाला था, उनके बंगले जला दिए थे और चारों ओर विद्रोह आरंभ कर दिया था। महाराज गुलाब-सिंह ने पंजाब के चीफ कमिश्नर सर जान लारेन्स के पास रावलपिंडी में अपने दीवान के भेज कर कहला दिया कि यदि आवश्यकता हे ते मैं अपना सारा खजाना और फौज अँगरेज सरकार की सेवा के लिए दे सकता हूँ। उन्होंने अपने सब किले भी अँगरेजों के अर्पित कर दिए थे और उन अँगरेजी महिलाओं का पूरा पूरा स्वागत और आतिथ्य करने का वचन दिया था जो मरी या अन्य स्थानों से भाग कर उनके राज्य में आतीं। सर लारेन्स ने भी उनकी यह सेवा स्वीकार कर ली थी और दीवान हरीचन्द से सेनाओं के अपने अधीन कर लेने तथा दस लाख श्रीनगरी रुपये भेजने के लिए कहा था।

एक दिन महाराज गुलाबसिंह ने अपना आगम जान कर पं० शिवशंकर के अपनी अन्त्येष्टि क्रिया के संबंध में अनेक बातें बतलाईं। उसी अवसर पर उन्होंने अपने दीवान के अपनी एक जीवनी*

* यह जीवनी फारसी भाषा में लिखी गई थी। प्रस्तुत लेख उसी जीवनी के आधार पर तैयार किया गया है।

लिखने के लिए भी कहा था। धीरे धीरे महाराज की तबियत बिगड़ती गई और अन्त में संवत् १९१४ के २० वें सावन को (सन् १८५७) वे स्वर्गवासी हुए। अन्तिम समय उन्होंने सवा लाख श्रीनगरी रुपये, एक बहुत बड़ी जागीर, कई बाग, बहुत से घोड़े, हाथी और जवाहिरात तथा बहुमूल्य वस्त्र दान किए थे।

—:०:—

ऋग्वेद की यज्ञप्रशस्तियां।

वैदिक काल में यह प्रथा थी कि जब कोई राजा कोई बड़ा यज्ञ करता था और उसमें अभूतपूर्व दान देता था तब ऋषि लोग उस के यज्ञ और दान की प्रशस्तियाँ मन्त्रों में रचते थे। अथर्ववेद के देखने से अनुमान होता है कि पहले इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा और नाराशंसी नामक पाँच प्रकार के ग्रंथ ऋषियों ने वैदिक भाषा में लिखे थे। पर संहिताओं के संस्करण के पूर्व अर्थात् महाभारत के पहले ही ऐसे ग्रंथों का लोप हो गया था। यास्काचार्य्य को ऐसे ग्रंथों और उनके रचनेवालों का कुछ भी पता नहीं चला था और उन्होंने 'अत्रैतिहासमाचक्षते' इत्यैतिहासिकाः। लिख कर ही इनके मतों को उद्धृत किया है। वर्त्तमान संहिताकारों ने कुछ यज्ञप्रशस्तियों को ऋग्वेद में जगह जगह पर सूक्तों में रख दिया है। आज हम ऋग्वेद से ऐसी प्रशस्तियां निकाल कर यहाँ लिखते हैं। आशा है कि ये इतिहास-प्रेमियों के काम की होंगी।

१—अभ्यावर्तीचायमान् की प्रशस्ति।

इसकी प्रशस्ति ऋग्वेद मंडल ६ सूक्त २७ में है। चायमान् का पुत्र अभ्यावर्ती सम्राट् था। उसने राजसूय यज्ञ में चालीस गायों और कन्याओं के साथ कई रथ भरद्वाज ऋषि को दक्षिणा में दिये थे।

द्वयाँ अग्ने रथिनो विंशतिं गा, वधूमन्तो मघवा मह्य सम्राट्।
अभ्यावर्ती चायमानो ददाति, दूणा शेयं दक्षिणा पार्थवानाम्॥

हे अग्निदेव, यज्ञ करने वाला चायमान् का पुत्र अभ्यावर्ती राजाओं का सम्राट् वधू * और रथ के साथ मुझे दो बीसी गौएं देता है। यह दक्षिणा नाश रहित हो।

२—प्रस्तोकसृंजय की प्रशस्ति।

प्रस्तोक राजा सृंजय का पुत्र था। इसका दूसरा नाम दिवोदास भी था। यह शंबर जाति के असुर राजा को विजय कर बहुत सा धन लाया था। भरद्वाज गोत्री गर्ग और पायु आदि ऋषियों ने उससे यज्ञ कराया था। प्रस्तोक ने यज्ञ की दक्षिणा में गर्ग को दस घोड़े, दस रेशमी कपड़े, दस थैले, दस बहुमूल्य वस्त्र, दस सोने के पिंड (जो शायद निष्क थे) और बहुत सा धन दिया था। अथर्व गोत्री पायु को उसने दस अश्व-युक्त रथ और सौ गौएं दी थीं। इसकी प्रशस्ति भरद्वाज गोत्रियों की लिखी हुई ऋग्वेद मंडल ६ सूक्त ४७ में हैः—

प्रस्तोकइन्नु राधसस्तइन्द्र दशकोशयीर्दशवाजिनोऽदात्
दिवोदासादतिथिग्वस्य राधः, शांबरंवसु प्रत्यग्रभीष्म। १।
दशश्वान्दशकोशान्दशवस्त्राधिभोजना,
दशोहिरण्यपिंडान्दिवोदासादसानिषम्। २।
दशरथान्प्रष्टिमतःशतंगा अथर्वभ्यः। अश्वथः पायवेऽदात्। ३।
महिराधोविश्वजन्यं दधानान् भारद्वाजान्त्सार्जयोअभ्ययष्ट। ४।

हे इन्द्र, प्रस्तोक ने दस कोशयी (कोशावस्त्र) और दस घोड़े दिये। दिवोदास से अतिथिग्व का धन, जिसे उसने शंबर नामक असुर राजा से जीत कर लिया था, मैंने ग्रहण किया॥१॥ दस घोड़े, दस कोश, दस बहुमूल्य वस्त्र और सोने के दस पिंड दिवोदास से मुझे मिले॥२॥ अश्वथ ने अथर्वगोत्री पायु को दस रथ जिनमें घोड़े जुते थे और सौ गौएं

* देखो मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक २८
यज्ञे तु वितते सम्यगृत्विजेकर्मकुर्वते।
अलंकृत्य सुतादानं दैवं धर्मं प्रचक्षते॥

दीं ॥ ३ ॥ सृंजय के पुत्र प्रस्तोक ने विश्वजन्य (सब के हितकारी) श्रेष्ठ ऐश्वर्य वा धन के रखनेवाले भरद्वाज गोत्रियों की इस प्रकार पूजा की ॥४॥

३—सुदास पैजवन की प्रशस्ति।

यह सुदास राजा पिजवन गोत्री दिवोदास का पुत्र था। इसके नाना का नाम देववत था। यह सिंधुनद के पश्चिम (अफ़गानिस्तान आदि) का राजा था। इसे पहले वशिष्ठजी ने यज्ञ कराया था। इस यज्ञ में सुदास ने वशिष्ठ को दो सौ गाएँ और दो रथ कन्याएँ बैठा कर तथा चार घोड़े सुनहले जीन सहित दक्षिणा में दिये थे। पीछे सुदास ने वशिष्ठजी से बिगड़ कर विश्वामित्र को कोशल से अपना अश्वमेध यज्ञ कराने के लिये बुलाया। पहले वशिष्ठ ने उसे बहुत कुछ समझाया पर जब राजा ने नहीं माना तब वे विश्वामित्र के विरोधी हो गये और उनके अनुयायियों ने विश्वामित्र पर जब वे व्यास और सतलज के संगम पर पहुँचे डाका डाला और उन्हें बाँध कर ले चले। उस समय विश्वामित्र ने जो कुछ कहा और किया उसका वर्णन ऋग्वेद मं० ३ में है। सुदास के उस दान की प्रशस्ति वशिष्ठजी की रची हुई ऋग्वेद मंडल ७ सक्त १८ में हैः—

द्वे नप्तुर्देववतः शतेगोर्द्वारथावधूमन्तासुदासः।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्यदानंहोतेवसद्मपर्येमरेभन् ॥ १ ॥
चत्वारोमापैजवनस्यदानाः स्मद्दिष्टयःकृशनिनो निरेके।
ऋज्रासो मा पृथिविष्टाः सुदासस्तोकंतोकायश्रवसेवहन्ति ॥२॥
यस्यश्रवोरोदसीअन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णेविबभाजा विभक्ता।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नियुध्यामधिमशिशादभीके ॥३॥
इमंनरोमरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः।
अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणाशं क्षत्रमजरं दुवोयु ॥ ४ ॥

हे अर्हन अग्निदेव! देववत के नाती पैजववंशी सुदास के (यज्ञ में) मैं होता बन अर उससे सौ गायें और दो रथ जिनमें वधू सवार थीं दान में लेकर अपने घर आया ॥१॥

सुदास पैजवन ने जो दान में चारों (घोड़े) दिये थे वे सोने से लदे हुए और पृथिवी पर सीधे चलनेवाले थे। उसने वह दान मुझे दुर्गति में दिया था ॥२॥ जिस के यश पृथिवी और द्युलोक में और विभक्त (दिया हुआ दान) सिर सिर पर बँटे हुए हैं। सातों नद जिसकी इंद्र के तुल्य स्तुति करते हैं कि (उसने) युद्ध में अपने प्रतिद्वंद्वियों का नाश कर डाला ॥३॥ हे नेता मरुत्! सुदास की सेवा करो जो अपने पिता दिवोदास के तुल्य है पैजवन के घराने की रक्षा करो। उस परिचरण की कामनावाले राजा का क्षत्र अजर अमर हो।

४—आसंग की प्रशस्ति।

प्लयोग के पुत्र आसंग नामक राजा ने मेध्यातिथि से यज्ञ कराया था उसने दक्षिणा में मेध्यातिथि को उत्तम साजों से युक्त घोड़ों सहित रथ और दस बैल दिये थे। उसकी यज्ञ-प्रशस्ति ऋग्वेद मंडल ८ सूक्त १ में हैः—

स्तुहिस्तुहीदेते घाते मंहिष्ठासो मघोनाम्,
निन्दिताश्वः प्रपथी परमज्यामघस्यमेध्यातिथे ॥१॥
आयदश्वान्वनन्वतः श्रद्धयाहं रथेरुहम्।
उत वामस्यवसुनश्चिकेततियोअस्तियाद्वः पशुः ॥२॥
य ऋज्रामह्यंमामहे सहत्वचाहिरण्यया।
एष विश्वान्यभ्यस्तुसौभगासंगस्य स्वनद्रथः ॥३॥
अधप्लायोगिरतिदासदन्यानासंगोअग्नेदशभिः सहस्रैः।
अधोक्षणोदशमह्यंरुशंतो नलाइव सरसो निरतिष्ठन् ॥४॥

हे मेध्यातिथि। इसकी स्तुति करो, इसकी। यह धनवानों में तुम्हें सब से अधिक धन देनेवाला है; इसके घोड़े के सामने दूसरे घोड़े लज्जित हो जाते हैं, यह सन्मार्ग गामी है और इसकी ज्या बड़ी उत्कृष्ट है ॥१॥ जिसके श्रेष्ठ घोड़ों से युक्त रथ पर (जब) मैं श्रद्धा से सवार होता हूँ (उस समय) जो यदु के पशु हैं वे श्रेष्ठ धन को चमकाते हैं ॥२॥ जिस (आसंग) ने मुझे सुनहली त्वचा (झूल) के साथ ऋजुगामी (घोड़ों) को मुझे दिया उस आसंग का शब्दायमान् रथ समस्त सौभाग्य को प्राप्त हो। हे अग्नि आसंगप्लयोगि ने मुझे अन्यों से दस हजार गुना अधिक दिया। उसके

दिये हुए दस बैल मुझे प्रकाशित करते हैं। वे खड़े होने पर नदी के किनारे के नर के समान हैं।

५—विभिंद की प्रशस्ति।

विभिन्द राजा ने यज्ञ में मेध्यातिथि को अड़तालीस हज़ार गायें और रणा की दो नतिनियां माकी को दक्षिणा में दो थीं। उसकी यज्ञ प्रशस्ति ऋग्वेद मंडल ८ सूत्र २ में इस प्रकार है।

शिक्षाविभिन्दोअस्मैचत्वार्यंयुनतद्दत्। अष्टापरः सहस्ता ॥१॥
उतसुत्ये पयोवृधामाकीरणस्यनप्त्याजनित्वनाय मामहे ॥२॥

हे विभिन्द तू ने इसे चार अयुत (चालीस हज़ार) से ऊपर आठ हज़ार दिया ॥१॥ और दूध बढ़ानेवाली दो माकी* जो रणा† की नतिनी हैं जनन (बियसने) के लिये मुझे मिलीं ॥२॥

६—पाकस्याम कौरायण की प्रशस्ति।

पाकस्थाम कौरायण भोजवंशी राजा था, उसने मेध्यातिथि काण्व को लाल रंग का घोड़ा, वस्त्र, अन्न और अभ्यंगादि दिये थे। उसकी प्रशस्ति मेध्यातिथि की लिखी हुई ऋग्वेद के मंडल ८ सूक्त ३ में है।

यमेदुरिन्द्र मरुतः पाकस्थाम कौरायणः।
विश्वेषां त्मनाशोभिष्ठमुयेव दिवि धावमानम् ॥१॥
रोहितं मे पाकस्थामा सुधुरंकक्ष्य प्राम्।
अदाद्रायो विबोधनम् ॥२॥
यस्या अन्ये दश प्रतिधुरंवहंति वह्नयः।
अस्तं वयो नतुग्र्यंम् ॥३॥
आत्मा पितुस्तनूर्वास ओजोदा अभ्यंजनम्।
तुरीयमिद्रोहितस्य पाकस्थामानंभोजंदातार बवम् ॥४॥

जो इंद्र और मरुत ने दिया उसी के समान सब में स्वयं शोभित (धन) जो आकाश में धावमान् है पाकस्थामा कौरायण ने मुझे दिया ॥१॥ पाकस्थामा ने बहुत धन का बोधक लाल रंग का घोड़ा जो तंग से कसा था दिया ॥२॥ जिसकी जगह धुर को अन्य दस खींचनेवाले खींचते हैं और तुग्र्य को घर ले जानेवाले के समान हैं ॥३॥ अपने बाप के बेटे (उसने) वास दिया भोज दिया और अभ्यंजन दिया। ऐसे रोहित (लाल रंग के घोड़े) के देनेवाले तुरीय भोज पाकस्थामा की मैं प्रशंसा करता हूँ ॥४॥

७—कुरंग की प्रशस्ति।

कुरंग ने देवातिथि काण्व को सौ घोड़े दिये थे और साठ हज़ार गायें दी थीं जिन्हें उन्होंने प्रियमेध नामक अपने संबंधियों में बाँट दिया था। उसकी प्रशस्ति मंडल ८ सूक्त ४ में है।

स्थूरंराधः शताश्वं कुरंगस्य दिविष्टिषु।
राज्ञस्त्वेषस्य सुभगस्य रातिषुतुर्वशेष्वभन्महे ॥१॥
धीभिः सातानि काण्ववस्य वाजिनः प्रियमेधैरभिद्युभिः।
षष्टिंसहस्रानुनिर्मजामजे निर्यूथा निगवामृषिः ॥२॥
वृक्षाश्चिन्मे अभिपित्वे अरारणुः।
गां भजन्त मेहनाश्वं भजन्त मेहना ॥३॥

तेजस्वी सुभग कुरंग के मोटे सौ घोड़े और धन यज्ञों में उनके मित्र तुर्वशों के बीच मुझे मिले ॥१॥ कण्व गोत्री याजक के स्तोता तेजस्वी प्रियमेधों ने उन्हें परस्पर बांट लिया, साठ हज़ार शुद्ध गायों के यूथ ऋषि को मिले थे ॥२॥ मैं गायों के ऐश्वर्य्य से और घोड़ों के ऐश्वर्य्य से उन्हें पाकर पेड़ के समान हरहराने लगा।

८—कशु चैद्य की प्रशस्ति।

चेदि के पुत्र कशु ने अश्विनीकुमार का यज्ञ किया था। उसमें उसने ब्रह्मातिथि काण्व को सौ ऊँट दस हज़ार गाएं और दस राजा, जिन्हें वह युद्ध में जीत कर पकड़ लाया था, दक्षिणा में दिये थे। उसकी प्रशस्ति ऋग्वेद मंडल ८ सूक्त ५ में हैः—

ता मे अश्विना सनीनां विद्यातां नवानाम्।
यथा चिच्चैद्यः कशुः शतमुष्ट्रानां ददत्सहस्रदश गोनाम् ॥१॥
यो मे हिरण्य सन्दृशो दशराज्ञो अमंहत।
अधस्पदा इच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्मम्ना अभितोजनाः ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो! तुम मेरे नये धनों को जानो जिस प्रकार चेदि के पुत्र कशु ने मुझे सौ ऊँट और दस हज़ार गायें दीं। जिस चेदि के पुत्र ने मुझे हिरण्य

* 'मा की' गो की एक जाति थी जो बहुत दूध दिया करती थी। इसका नाम ऋग्वेद के अनेक स्थलों में आया है।

† 'रणा' नामक देश के बैल। वेदों में उपारणा प्रदेश का नाम आता है जो रणा के किनारे था। इसी रणा को इरणा (ईरान) भी कहते थे।

सदृश दस राजा दिये उस कशु के पैर के तलुवे को उसकी प्रजा चर्मधारी सदा सेवन करती है।

९—तिरिन्दिर पारशव्य की प्रशस्ति।

तिरिंदिर परशु का पुत्र यदुवंशी राजा था। वह ककुह प्रदेश (काबुल) में राज्य करता था। उसने कण्व गोत्री वत्स ऋषि को एक हज़ार का धन (शायद निष्क) दिया था और चार जोड़ी ऊँट दिये थे। उसने सामग पज्र के पुत्र कक्षीवान् को तीन हज़ार घोड़े और दस हज़ार गाएं दी थीं। उसकी प्रशस्ति ऋग्वेद मंडल ८ सूक्त ६ में है।

शतमहंतिरिन्दिरेसहस्रं पर्शावाददे
राधांसि याद्वानाम् ॥१॥
त्रीणिशतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम्।
ददुष्पज्राय साम्ने ॥२॥
उदानटककुहोदिवमुष्ट्रा ञ्चतुयुजेददत्
श्रवसा याद्वंजनम् ॥३॥

मैंने परशु के पुत्र तिरिंदिर नाम के यादवों राजा से एक हज़ार धन पाया ॥१॥ उसने पज्र के वंशज सामग कक्षीवान् को तीन सौ घोड़े और दस हज़ार गाएं दी हैं। उसने यादवों की कीर्ति को और ककुह को उठाकर स्वर्ग पहुँचा दिया।

१०—पौरुकुत्स त्रसदस्यु की प्रशस्ति।

पुरुकुत्स के पुत्र त्रसदस्यु ने कण्व ऋषि को सुवास्तु (स्वात) नदी के किनारे यज्ञ करके पाँच सौ कन्याएं, बहुत सा धन और वस्त्र तथा दो सौ सत्तर गाएं और एक काला सांड जो उनके आगे चलता था दक्षिणा में दिया था। उसकी प्रशस्ति मंडल ८ सूक्त १९ में है।

अदान्मे पौरुकुत्सः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम्।
मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः ॥१॥
उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधितुग्वनि।
तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद्वसुर्दियानां पतिः ॥२॥

दानी राजा सत्पति पौरुकुत्स त्रसदस्यु ने मुझे पाँच सौ वधुएँ दीं और उनके साथ बहुत सा धन और वस्त्र दिया। यह दान सुवास्तु नदी के किनारे दिया गया। तीन सौ सत्तर दी हुई गायों का पति काला सांड उनके आगे चलता था।

११—चित्र की प्रशस्ति।

चित्र* सारस्वत प्रदेश का राजा था। उसने सरस्वती के किनारे यज्ञ किया था। कण्वसौभरि इसके याजक थे, उसने उन्हें बहुत सा धन दक्षिणा में दिया था। उसकी प्रशस्ति मंडल ८ सूक्त २१ में यह है।

इन्द्रो वाघेदियन्मघं सरस्वती सुभगा ददिर्वसु।
त्वं वा चित्र दाशुषे ॥१॥

---

* स्कंदपुराण से ज्ञात होता है कि चित्र ने सूर्य्य का तप किया और उसके प्रभाव से वह सर्वज्ञ कुशल हो गया। धर्मराज को इसी बीच में एक लेखक की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने चित्र को अपना लेखक बनाना चाहा। एक दिन चित्र समुद्र के किनारे अग्नितीर्थ नामक स्थान में स्नान कर रहे थे, उन्हें यम के दूतों ने यम की आज्ञा से पकड़ लिया और उठा कर यमलोक ले गये। वहाँ वे चित्रगुप्त नाम से यमराज के लेखक हुए।

एवं तु स्तुवतस्तस्य चित्रस्य विमलात्मनः।
तथातुष्टः सहस्रांशुः कालेन महता विभुः ॥
अब्रवीद्वत्स भद्रं ते वरं वरय सुव्रत !।
सोऽब्रवीद्यदिमेतुष्टो भगवांस्तीक्ष्णदीधिते।
प्रौढत्वं सर्वकार्य्येषु जायतांसन्मतिस्तथा ॥
तत्तयेति प्रतिज्ञातं सूर्य्येण वरवर्णिनि !।
ततः सर्वज्ञतां प्राप्तश्चित्रो मित्रकुलोद्भवः ॥
तं ज्ञात्वा धर्मराजस्तु बुध्या परमया युतः।
चिन्तयामास मेधावी लेखकोयं भवेद्यदि ॥
जाता मे सर्वसिद्धिश्च निवृ तिश्च पराभवेत्।
एवं चिन्तयतस्तस्य धर्मराजस्य भामिनि ! ॥
अग्नितीर्थे गतश्चित्रः स्नानार्थं लवणाम्भसि।
सतन्त्र प्रविशन्नेव नीतस्तुयमकिंकरैः ॥
सशरीरो महादेवि यमादेशपरायणैः।
सचित्रगुप्तनामाभूत् विश्वचारित्रलेखकः ॥

चित्रइद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ।
पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्ट्या सहस्रमयुता ददत् ॥२॥

क्या यह धन इन्द्र ने दिया अथवा सुभगा सरस्वती ने यह धन दिया अथवा हे चित्र तूने दिया है ।१। चित्र ही राजा है जो हजार अयुत देते हुए सरस्वती के किनारे मेघ के समान बरसता है । अन्य सब राजा राजक (राजुक तुच्छ) हैं ।

—:o:—

सभा का कार्यविवरण ।

प्रबन्धकारिणी-समिति ।

मंगलवार तारीख़ ५ मई १९१४—सन्ध्या के ६ बजे

स्थान-सभाभवन ।

(१) गत अधिवेशन (ता० ३१ जनवरी १९१४) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

(२) हिन्दी पुस्तकों की खोज के सम्बन्ध में पण्डित श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० की सन् १९१३ की रिपोर्ट उपस्थित की गई ।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार की जाय और गवर्नमेंट की सेवा में भेज दी जाय ।

(३) बाबू तेजूमल एम० कनल का २६ फरवरी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें "देशसेवा" पर एक सर्वोत्तम लेख के लिये उन्होंने ५) रु० का मेडल सभा द्वारा देने के लिये लिखा था और इस लेख में किन किन बातों का उल्लेख होना चाहिए उसका वर्णन किया था ।

निश्चय हुआ कि सभा को दुःख है कि वह इस मेडल के लिये लेख लिखवाने का प्रबन्ध नहीं कर सकेगी ।

(४) पण्डित रामचन्द्र शुक्ल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि पण्डित केदारनाथ पाठक ने उन्हें बाबू राधाकृष्णदास का जीवनचरित्र लिखने में जो सहायता दी है उसके लिये पाठक जी को इस पुस्तक की ५ प्रतियाँ सभा से मिलनी चाहिए ।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय ।

(५) पण्डित बाबूराम अवस्थी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि सभा "हवाई जहाज़" और "पदार्थ-विज्ञान से लाभ" पर लेख भेजने का समय बढ़ा दे तो वे इन दोनों विषयों पर सभा के पास लेख भेज सकते हैं ।

निश्चय हुआ कि पण्डित बाबूराम अवस्थी को लिखा जाय कि इस वर्ष सभा द्वारा मेडलों के लिये जो विषय नियत हैं उनमें हवाई जहाज़ का विषय भी है । उक्त विषय पर यदि वे ३१ दिसम्बर १९१४ तक लेख भेज सकें तो उत्तम होगा ।

(६) ब्यावर की म्युनिसिपेल कमेटी, हरदोई के नागरीप्रचारक पुस्तकालय और बम्बई के मारवाड़ी पुस्तकालय के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने अपने पुस्तकालयों के लिये सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें अर्द्धमूल्य पर माँगी थीं ।

निश्चय हुआ कि उन्हें इन पुस्तकों की एक एक प्रति अर्द्धमूल्य पर दी जाँय ।

(७) बालाघाट के श्रीयुत पण्डा बैजनाथ जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि सभा मिस्टर जी० स्पिलर की ट्रेनिङ्ग आफ़ दी चाइल्ड नामक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करे तो वे इसके लिये सभा को ६०) रु० की सहायता देंगे ।

निश्चय हुआ कि इस पुस्तक की एक प्रति मँगवा कर पण्डित सर्यू नारायण त्रिपाठी के पास भेज दी जाय और उनसे प्रार्थना की जाय कि वे इसका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने के सम्बन्ध में सभा को अपनी सम्मति दें ।

(८) ठाकुर केशरीसिंह बारहट का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा "ज्योतिषप्रबन्ध" की १०० प्रतियों के स्थान में केवल ५० प्रतियाँ लेकर उन्हें इस लेख को पुस्तकाकार निकालने की आज्ञा दे।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(९) पण्डित साँवल जी नागर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा के पुस्तकालय के अँगरेज़ी विभाग से पुस्तकें लेने की आज्ञा माँगी थी।

निश्चय हुआ कि उन्हें एक बार में एक पुस्तक के लेने की आज्ञा दी जाय।

(१०) हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्यालय के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने अपने कार्यालय के लिये हिन्दी शब्दसागर तथा नागरीप्रचारिणी पत्रिका दिए जाने के सम्बन्ध में लिखा था।

निश्चय हुआ कि ये दोनों हों उन्हें बिना-मूल्य दिए जायँ।

(११) उन सज्जनों की नामावली उपस्थित की गई जिन्होंने अब तक सभा के स्थायी कोश में २००) रु० वा इससे अधिक द्रव्य प्रदान किया है और जिनके नाम सभा के निश्चय के अनुसार पत्थर वा संगमरमर पर खोद कर सभा-भवन में लगना चाहिए।

निश्चय हुआ कि इसके व्यय का एक एस्टिमेट समिति के आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(१२) १९ नवम्बर १९१३ से २८ नवम्बर १९१३ और १५ फरवरी १९१४ से २० अप्रैल १९१४ तक बीमारी के वेतन के सम्बन्ध में पं० केदारनाथ पाठक का पत्र उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि पण्डित केदारनाथ पाठक को इतने दिनों का पूरा वेतन दिया जाय और पं० कन्हैयालाल को जो पाठक जी ने अपने स्थान पर कार्य करने के लिये भेजा था उन्हें पाठक जी अपने पास से वेतन दें।

(१३) पण्डित साँवल जी नागर का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि हिन्दी विश्वकोश में सभा के शब्दसागर से बहुत से शब्द और उनके अर्थ ज्यों के त्यों उद्धृत कर लिये गए हैं जिससे सभा को बहुत हानि पहुँचेगी। अतः इस विषय में सभा को उचित काररवाई करनी चाहिए।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी की सम्मति के सहित आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(१४) पण्डित रामनारायण मिश्र का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि "मनोरंजन सीरीज़" नाम की पुस्तकमाला जिसे बाबू श्यामसुन्दर दासजी निकाला चाहते हैं इस सभा द्वारा प्रकाशित की जाय।

निश्चय हुआ कि निम्नलिखित सज्जनों से प्रार्थना की जाय कि वे इस प्रस्ताव पर भली भाँति विचार कर इस सम्बन्ध में सभा को अपनी सम्मति दें अर्थात् बाबू श्यामसुन्दर-दास, बाबू गौरीशंकरप्रसाद और पण्डित रामनारायण मिश्र।

(१५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबन्धकारिणी-समिति।

शनिवार तारीख़ १६ मई १९१४ सन्ध्या के ६ बजे
स्थान-सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (तारीख़ ६ मई १९१४) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) हिन्दी की मनोरंजन पुस्तकमाला को निकालने के सम्बन्ध में सब कमेटी की रिपोर्ट उपस्थित

की गई जिसमें उस कमेटी ने सम्मति दी थी कि बाबू श्यामसुन्दरदास जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक सभा की ओर से इस पुस्तकमाला के प्रकाशन का प्रबन्ध कर दें।

निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुन्दरदास जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक ऐसा प्रबन्ध करें जिससे कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार पुस्तकमाला प्रकाशित हो सके।

(३) ग्वालियर की हस्तलिपि परीक्षा के पर्चे उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि इनकी परीक्षा के लिये निम्नलिखित सज्जनों की सब कमेटी बना दी जाय अर्थात् बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल० एल० बी०, बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० और पण्डित रामचन्द्र शुक्ल।

(४) सभा के २९वें नियम के अनुसार सन् १९१४-१५ के लिये पदाधिकारियों और प्रबन्धकारिणी-समिति के सभासदों के चुनाव के लिये निम्नलिखित सूची तयार की गईः—

एक सभापति और दो उपसभापति—

पण्डित श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०
पण्डित गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०
रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स
पण्डित रामावतार पाण्डेय
उपाध्याय पण्डित बद्रीनारायण चौधरी
पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए०

एक मंत्री और एक उपमंत्री

बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल० एल० बी०
पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए०
बाबू ब्रजचन्द
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा

प्रबन्धकारिणी समिति के सभ्य।

काशी से ४—बाबू जुगलकिशोर।
बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल० एल० बी०।
बाबू वेणीप्रसाद।
बाबू ब्रजचन्द्र।
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा।
पण्डित माधवप्रसाद पाठक।
पण्डित गिरिजादत्तवाजपेयी।
दूबे सांवल जी नागर।
गोस्वामी रामपुरी।
बाबू माधवप्रसाद।
बाबू सम्पूर्णानन्द।

मध्यभारत से १—पण्डित श्यामबिहारीमिश्र एम० ए०।
पण्डित गणपत जानकीराम दुबे बी० ए०।

संयुक्त प्रदेश से १—बाबू शिवकुमारसिंह।
बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन।
पण्डित शुकदेव बिहारी मिश्र।

राजपुताने से १—पण्डित चन्द्रधर शर्म्मा गुलेरी बी० ए०।
रायबहादुर पुरोहित गोपीनाथ चौबे।

(५) पण्डित विक्रमादित्य त्रिपाठी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रार्थना की थी कि वे इस सभा के सभासद चुन लिये जांय और उनका चन्दा क्षमा किया जाय।

निश्चय हुआ कि उनकी यह प्रार्थना स्वीकार नहीं की जा सकती।

(६) कुदरत अली दफ़्री का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने अपने एक मास का वेतन पेशगी दिए जाने के लिये प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि सभा के किसी कार्यकर्त्ता को किसी अवस्था में पेशगी वेतन न दिया जाय।

(७) पण्डित उमाकान्त शुक्ल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बनारस की

दीवानी अदालत में सभा की ओर से जो मुहर्रिर नियत है वह नागरी में मुफ़ अर्जियाँ लिखने की ओर कुछ भी ध्यान नहीं देता। अतः सभा इसका उचित प्रबन्ध करे।

निश्चय हुआ कि मोहर्रिर से इस विषय में उत्तर मांगा जाय।

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण अधिवेशन।

शनिवार तारीख ३० मई १९१४—सन्ध्या के ६ बजे। स्थान-सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० २८ मार्च १९१४) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) प्रबन्ध कारिणी समिति के तारीख ३१ जनवरी और ५ मई १९१४ के कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किए गए।

(३) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के फ़ार्म उपस्थित किए गए—

(१) बाबू अम्बिकाप्रसादगुप्त-सराय गोवर्द्धन—काशी ३) (२) पण्डित ओंकारलाल त्रिपाठी—शाहपुरा—मेवाड़ १॥) (३) बाबू अनन्तप्रसाद गौड़—भारद्वाजी टोला—काशी १॥) (४) चौ० गोपीनाथसिंह-मेडिकल कालेज-लखनऊ १॥) (५) पं० गयाप्रसादपांडे—अमरौधा—जि० कानपुर १॥) (६) पं० केशवानन्द चौबे—ट्यूटर—छुरा—आया राजिम ५) (७) बाबू अनिरुद्धसिंह—नीलगाँव—जि० सीतापुर ३) (८) पं० विद्याधर झा—मीरघाट—काशी १॥) (९) पं० कालीचरण त्रिवेदी—अन्नपूर्णा प्रेस—पुरुलिया—मानभूम ६) (१०) बाबू बिहारीलाल सराफ़—रानीगंज ई० आई० आर ३)।

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँय।

(४) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुएः—(१) पं० सोमनाथ नायक पालना—महल्ला भिखारीदास, काशी। (२) पं० पी० एन० पाटंकर—धार (३) बाबू महादेवप्रसाद गुप्त—काशी।

(५) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईंः—

पण्डित माधवराव सप्रे बी० ए०।
शालोपयोगी भारतवर्ष।

पण्डित सूर्यनारायण त्रिपाठी, ज़बलपुर।
आदर्शवीरांगना वा रानी दुर्गावती।

बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०—काशी।
हिन्दी कोविदरत्नमाला दूसरा भाग।

The Government of India.

हिन्दी ग्रन्थ प्रसारक मंडली, खंडवा।
मिश्रबन्धुविनोद पहिला भाग।

ठाकुर हनुमन्तसिंह—आगरा
महाराष्ट्रकेशरी शिवाजी
महादेव गोविन्द रानाडे
भीष्मपितामह
मार्टिन लूथर

पण्डित सुदर्शनाचार्य बी० ए०, गृहलक्ष्मी कार्यालय, इलाहाबाद
आदर्शबहू और भाई बहिन
प्रेमलता
लक्ष्मीबहू
सती लक्ष्मी

मिसर्स आर० एल० बर्म्मन एण्ड को, कलकत्ता
लण्डन रहस्य भाग १ सं० १—४

मेनेजर, सत्यग्रन्थमाला आफ़िस, प्रयाग
सत्यग्रन्थमाला सं० ७

श्रोत्रिय कृष्ण स्वरूप बी० ए० एल० एल० बी०, मुरादाबाद
आरोग्यता प्राप्त करने की नवीन विद्या

बाबू मुख्त्यारसिंह वकील, मेरठ
वैज्ञानिक विश्वकोश

पण्डित सांवल जी नागर—काशी
कलियुग

श्रीयुत सम्पादक, जयाजीप्रताप, ग्वालियर
चन्द जरूरी नसीहतें
मास्टर हरिद्वारीसिंह, अध्यापक, महाविद्यालय, ज्वालापुर
भारतीय शिष्य ईसा
पण्डित गंगाशंकर पंचौली, सदर हाईस्कूल, भरतपुर
भरतपुरवृत्त
व्यापारशिक्षक
करण लाघव
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा, काशी
सूर्यकान्ता
वीरजयमल
मेनेजर, सत्यवादी, गिरगाँव, बम्बई
वनवासिनी
डाकृर के० एम० घोष एल० एम० एस०, काशी
धातुदौर्बल्य
बाबू सम्पूर्णानन्द बी० एस० सी०, काशी
धर्म्मवीर गान्धी
हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, गिरगाँव, बम्बई
चौबे का चिट्ठा
बाबू दयाचन्द्रजैन बी० ए०, जीवदयाविभाग, भा० जै० महामण्डल, लखनऊ
मनुष्याहार
मांसभक्षण पर विचार
अहिंसा
पण्डित श्रीरामशर्म्मा, १६० सूतापट्टी, कलकत्ता
श्रीमद्भगवद्गीता भाषाटीका
बाबू पन्नालाल जैन, काशी
जैनेन्द्रप्रक्रिया
तत्त्वार्थ राजवार्तिक
मंत्री, जुबिली नागरी भण्डार कार्यालय, बीकानेर
देशी राज्यों में हिन्दी और उसके प्रचार के उपाय
भारत की गवर्न्मेंट
Quinquennial Report on the Progress of Education in India 1907-12 Vols 1 and II.

कुंअर क्षत्रपति सिंह जी, कालाकाँकर
भर्तृहरिनिर्वेद नाटक की १२५ प्रतियाँ
एशियाटिक सोसायटी आफ़ बंगाल, कलकत्ता
Journal and Proceedings of the Society Vol IX Nos. 7-9.
पण्डित बच्चनपांडे, गवर्न्मेंण्ट हाईस्कूल, इटावा
होरेशियस की ७४१ प्रतियाँ
बनारस म्युनिसिपल बोर्ड
Health Officer's Report for the year 1913.
Indian Antiquary for March, April and May 1914.
Indian Thought Vol VI Nos. 2 and 3.
खरीदी गईं तथा परिवर्तन में प्राप्त
भारीभ्रम, सोमलता उपन्यास, श्रीदेवी, रम्भा-शुकसम्वाद, गीतगुंजार, दीपनिर्वाण, महेन्द्र-मोहिनी, भाषा महाभारतसार, दिल्लीदरबार, साहसी डाकू।
(६) सभापति के धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण अधिवेशन

शनिवार तारीख २७ जून १९१४—सन्ध्या के ६½ बजे। स्थान—सभाभवन

(१) गत अधिवेशन (ता० ३० मई १९१४) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।
(२) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के पत्र उपस्थित किए गए:—
(१) पण्डित नागेश्वरनाथ, नागेश्वर प्रेस, काशी १॥) (२) ठाकुर लक्ष्मणसिंह क्षत्रिय, ताल्लुकेदार, बनियामऊ, जि० सीतापुर ५) (३) बाबू मन्मथनाथ बेनर्जी, गणेशमुहल्ला (बंगालीटोला) काशी १॥) (४) राय बेनीप्रसाद मंत्री, हिन्दी भाषाप्रचारिणी सभा, मुजफ्फ़र-पुर १॥) (५) बाबू जगदम्बसहाय, मकान चमारीसाहु, महल्ला टिलहा, गया ५) (६)

बाबू मोहनलाल, हेडमास्टर, मिडिलस्कूल, पनागर, जि० जबलपुर ३) (७) लाला बालाप्रसाद, पनागर, जि० जबलपुर ५) (८) बाबू बांकेबिहारीलाल, श्रो० आर० लोकोशेड, मुगलसराय १॥) (९) पं० रघुवीरप्रसाद अवस्थी, २६० जूनीकलाल लाइन, सीतावर्डी, नागपुर १॥) (१०) बाबू श्यामकृष्णसहाय वैरिस्टर, रांची ३)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जांय।

(३) निम्न लिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए:—

(१) बाबू लायकसिंह, डिपटी कलेकृर, गोंडा (२) वैद्य शंकरलाल हरिशंकरजी, आयुर्वेदोद्धारक औषधालय, मुरादाबाद (३) गोस्वामी मोहनलाल, आयुर्वेदीय औषधालय, मैनगंज, एटा (४) बाबू कमलाप्रसाद—वैश्य बोर्डिंग हाउस, आगरा (५) कुमारी कलावती गार्गी—लखनऊ (६) पण्डित खेतलदास मिश्र, एलाएन्स बंक आफ़ शिमला, मसूरी, (७) पण्डित विनायक केशव, फ़ारेस्ट सेटलमेंट आफ़िसर, पिछोर, झांसी (८) पण्डित बच्चूलाल, इन्सपेक्टिंग पण्डित, हथुआ राज्य (९) पण्डित सुन्दरलाल, संस्कृतपुस्तकोन्नतिसभा, इटावा (१०) बाबू अम्बिकाप्रसाद सिंह रामापुरा, काशी (११) पं० बद्रीनारायण मिश्र, डिपटीइन्स्पेकर आफ़ स्कूल्स, सीतापुर (१२) बाबू केशवदास, सावमहल्ला, काशी (१३) बाबू अमरनाथ, ब्रह्मनाल, काशी (१४) कुमारी हरदेवी गार्गी, लखनऊ।

(४) मंत्री ने सूचना दी कि निम्नलिखित सभासदों के यहां सभा से नागरीप्रचारिणी पत्रिका अथवा चन्दे के लिये जो पत्रादि जाते हैं उन्हें वे लैाटा देते हैं:—(१) बाबू पर्वतराव सीतालय, डिपटी रेंजर, ककरौआ, पोहरी, ग्वालियर (२) राव बैजनाथदास शाहपुरी, कोतवालपुरा, काशी (३) पं०रामनारायण वैद्य, बाबर शहीद की गली, काशी (४) बाबू कन्हैयालाल, सेवकराम सदावर्ती की गली, काशी (५) बाबू गैारीशंकरप्रसाद, औसानगंज का गोला, काशी (६) बाबू नारायणदास पारिख, ठठेरी बाज़ार, काशी (७) बाबू मकसूदनलाल, रानीकुआं, काशी (८) पण्डित मुरलीधर झा, रामकटोरा, काशी (९) बाबू रघुनाथदास, चैाक, काशी (१०) बाबू शिवबालकराम, मैनेजर, काशी कोआपरेटिव बंक, काशी (११) पण्डित श्यामसुन्दर, चैाखम्भा, काशी (१२) बाबू श्रीदास गुप्त, बुलानाला, काशी।

निश्चय हुआ कि इन सज्जनों के नाम सभासदों की नामावली से काट दिए जांय।

(५) मंत्री ने निम्न-लिखित सभासदों की मृत्यु की सूचना दी:—

(१) आनरेब्ल मुंशी गंगाप्रसाद वर्म्मा, लखनऊ (२) पं० यदुनन्दन मिश्र, जुरावनसिंह, दरभंगा (३) बाबू हरबंदनलाल, एडिशनल सबजज, गोरखपुर, (४) बाबू बालकृष्णसहाय, वकील, रांची (५) पण्डित गंगाराम सारस्वत, दण्डपाणि की गली, काशी (६) बाबू सीताराम, चीनीबाजार, काशी।

इस पर सभा ने शोक प्रगट किया।

(६) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

पं० कालीचरण दुबे एल० एम० एस०, काशी

हैज़ा

बालकों के पोषणार्थ आवश्यक शिक्षाएं

दूध

ताऊन

मलेरिया

बाबू मथुरादास, सुपरवाइज़र, मिलिटरी वर्क्स, फ़ीरोज़पुर—

सन्धिविषय

अव्ययार्थ

जन्तरी सर्वनाम
पं० चतुर्भुज मिश्र, पो० चरता; जि० हज़ारीबाग
मनोहररामायण
लाला भगवानदीन—काशी
वीरमाता

(७) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबन्धकारिणी-समिति

शनिवार तारीख २७ जून १९१४—सन्ध्या के ६ बजे। स्थान—सभाभवन

(१) गत अधिवेशन (तारीख १६ मई १९१४) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) पटना के चैतन्य पुस्तकालय का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने अपने पुस्तकालय के लिये सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बिना मूल्य मांगी थीं।

निश्चय हुआ कि उन्हें प्रकाशित पुस्तकों की एक एक प्रति अर्द्ध मूल्य पर दी जांय।

(३) ग्वालियर और संयुक्त प्रदेश की हिन्दी हस्त-लिपि परीक्षा के पर्चों के सम्बन्ध में सब-कमेटी की रिपोर्ट उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि सब-कमेटी की सम्मति के अनुसार निम्न लिखित बालकों को पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिए जांयः—

ग्वालियर राज्य

मिडिल विभाग

१ ज्वालाप्रसाद, कक्षा २, ए० वी० एम० स्कूल, आगर, जि० शाजापुर ५)

२ घासीराम, मिडिल कक्षा, हिन्दी स्कूल, उज्जैन
३ न्याज़हसन, मिडिल विभाग, जनकगंज स्कूल, लश्कर, ग्वालियर
} प्रशंसा-पत्र

अपर प्राइमरी विभाग

१ राधाकृष्ण, कक्षा ३, पाठशाला रन्नौद, तहसील केलारस, जि० नरवर ३)

२ भमरलाल, कक्षा ३, पाठशाला रन्नौद, तहसील केलारस, जि० नरवर
३ भगवतीप्रसाद, कक्षा ४, पाठशाला नूराबाद, परगना नूराबाद, जि० तवरघार
} प्रशंसा पत्र

लोअर प्राइमरी विभाग

१ रामस्वरूप, कक्षा ७ अ, पाठशाला सबलगढ़, जि० तवरघार २)

२ माधवसिंह, कक्षा ७ अ०, सरदार स्कूल, ग्वालियर
३ रघुबर, कक्षा ६, पाठशाला सबलगढ़, ज़ि० तवरघार
} प्रशंसापत्र

संयुक्तप्रदेश

मिडिल विभाग

१ जसोदासिंह, कक्षा ६, मिडिल पाली स्कूल, अलमोड़ा ५)

२ द्वारिका प्रसाद, कक्षा ६, राजापुर स्कूल, तहसील मऊ, जि० बांदा ४)

३ नारायणदत्त, कक्षा ६, टाउनस्कूल, अलमोड़ा ३)

४ रामश्री, कक्षा ६, बिल्हौर स्कूल, बिल्हौर, जि० कानपुर
५ गजाधर, कक्षा ५, मिडिल भीमताल स्कूल, नैनीताल
६ सुलतानसिंह, तहसीली स्कूल, कक्षा६, सिकन्दराराव, जि० अलीगढ़
७ राधाकृष्ण, कक्षा ३, कटावां, जि० सुलतांपुर
८ शिवरत्न, कक्षा ५, पाठशाला इटौंजा, तहसील मलिहाबाद, लखनऊ
९ महाबीरसिंह, कक्षा ५, टाउनस्कूल, सुलतांपुर
} प्रशंसापत्र

अपर प्राइमरी विभाग

१ कलमसिंह, कक्षा ४, अपरप्राइमरी स्कूल, घीड़ी, पट्टीबनेलस्यूं, गढ़वाल ५)

२ देवीदयाल, कक्षा ४, राजापुर स्कूल, तहसील मऊ, जि० बांदा ३)

३ बलिराम, कक्षा ३, अपरप्राइमरी स्कूल, बड़ेत, जि० गढ़वाल २)

४ रामलखन, कक्षा ४, देवरिया स्कूल, देवरिया, जि० गोरखपुर

५ शिवनन्दन, कक्षा ४, तिलौली स्कूल, देवरिया, जि० गोरखपुर

६ दुर्गादत्त अस्नोड़ा, कक्षा ४, अपर स्कूल नौबाड़ा, तहसील रानीखेत, जि० अलमोड़ा

७ माताप्रसादसिंह, कक्षा ४, पखरौली स्कूल, सुलतांपुर

८ प्यारेलाल, कक्षा ३, तहसीली स्कूल, हाथरस, जि० अलीगढ़

(४ से ८ तक — प्रशंसापत्र)

लोअर प्राइमरी विभाग।

१—जीवानन्द, कक्षा २, घीड़ी स्कूल, पट्टीबनेलस्यूं, गढ़वाल ४)

२—भवानीसिंह विष्ट, कक्षा २, जैनी पाठशाला, जि० अलमोड़ा २)

३—उच्छवसिंह, कक्षा २, पाठशाला देवलचौड़, तहसील हल्द्वानी, जि० नैनीताल २)

४—कैलासराम, कक्षा २, लोअर प्राइमरी, स्कूल, वैरिया, जि० बलिया

५—सूर्यराम, कक्षा २, लोअर प्राइमरी स्कूल, वैरिया, जि० बलिया

६—अलीमुहम्मद मियां, कक्षा २, लोअर प्राइमरी स्कूल, वैरिया, जि० बलिया

७—फतहचन्द, कक्षा २, पाठशाला जेवर, जि० बुलन्दशहर

(४ से ७ तक — प्रशंसा पत्र)

(४) साहित्य सम्मेलन कार्यालय, प्रयाग के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने आगामी सम्मेलन के सभापति के चुनाव के लिये ५ सज्जनों की नामावली मांगी थी।

निश्चय हुआ कि इस चुनाव के लिये सभा निम्नलिखित सज्जनों को उपयुक्त समझती है अर्थात् पण्डित महावीरप्रसाद द्विवेदी, पण्डित श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०, पण्डित बालकृष्णभट्ट, पण्डित गौरीशंकर हीराचन्द ओझा और साहित्याचार्य्य पाण्डेय रामावतार शर्मा एम० ए०।

( ) हरदोई के सरस्वती क्लब के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सूचना दी थी कि क्लब ने यह निश्चय किया है कि सभा उसे अपनी अध्यक्षता में चलावे और वही इसकी कुल सम्पत्ति की मालिक रहे।

निश्चय हुआ कि सरस्वती क्लब के पूरे वृत्तान्त के सहित यह पत्र सभा के आगामी अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित किया जाय जिससे इस क्लब की स्थिति भलीभांति विदित हो जाय।

(६) कोश कार्यालय के कार्यकर्ताओं का यह प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया कि उनके लिये प्रिविलेज छुट्टी वर्ष में एक मास के स्थान पर केवल पन्द्रह दिन की कर दी जाय पर इसका उन्हें पूरा वेतन मिले और एक सप्ताह से कम के लिये यह छुट्टी न ली जाय।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(७) निश्चय हुआ कि गत अधिवेशन में आगामी वार्षिक चुनाव के लिये जो सूची बनाई गई है उसमें निम्नलिखित सज्जनों के नाम और बढ़ा दिये जायँ अर्थात् सभापति और उपसभापति की नामावली में बाबू काशीप्रसाद जायसवाल

बी० ए०, प्रबन्धकारिणी समिति के नगरस्थ सभ्यों में बाबू गंगाप्रसाद गुप्त ग्रैर इस समिति के राजपूताना निवासी सभ्यों में बाबू रामस्वरूप जैन ग्रैर कुंग्रर जोधसिंह मेहता।

(८) मंत्री ने ८६ सभासदों की नामावली उपस्थित की जिनके यहाँ दे। वर्ष से अधिक का चन्दा बाकी पड़ गया था।

निश्चय हुआ कि इन महाशयों को लिखा जाय कि यदि वे ३१ जूलाई १९१४ तक अपना कुल चन्दा आगामी वर्ष के चन्दे के सहित न भेज देंगे तो उनका नाम दुःख के साथ "सूची ख" में लिखा जायगा।

(९) राधाकृष्णदास मेडल के लिये "मानव जीवन पर नाटकों का प्रभाव ग्रैर हिन्दी में उनकी अवस्था" पर आए हुए लेखों के सम्बन्ध में सब कमेटी की सम्मति उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि यह मेडल पण्डित सांवलजी नागर को दिया जाय।

(१०) डाक्टर छन्नूलाल मेमोरियल मेडल के लिये "शारीरिक सुधार" पर आए हुए लेखों के सम्बन्ध में सबकमेटी की सम्मति उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि इन लेखों में से कोई भी मेडल के योग्य नहीं है।

(११) पण्डित सांवल जी नागर का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि हिन्दी विश्वकोश में सभा के शब्दसागर से बहुत से शब्द ग्रैर उनके अर्थ ज्यों के त्यों उद्धृत कर लिये गए हैं। अतः इस विषय में सभा को उचित कार्रवाई करनी चाहिए।

निश्चय हुआ कि हिन्दी विश्वकोश के प्रकाशक को लिखा जाय कि उन्होंने हिन्दी शब्दसागर के शब्दों ग्रैर अर्थों को इस प्रकार उद्धृत करने में बड़ा अनुचित किया है ग्रैर यदि वे आगे से इसे बन्द न कर देंगे तो सभा को अपने स्वत्व की रक्षा के लिये उचित उपाय करना पड़ेगा।

(१२) निश्चय हुआ कि हिन्दी पुस्तकों की खोज की सन् १९०९—११ की रिपोर्ट का मूल्य ४) रु० नियत किया जाय।

(१३) निश्चय हुआ कि निम्नलिखित पुस्तकों का दूसरा संस्करण सभा द्वारा यथाक्रम प्रकाशित किया जाय अर्थात् (क) सुघड़ दर्जिन (ख) चन्द्रावती (ग) धम्मपद का संशोधित संस्करण (घ) हरिश्चन्द्र (च) नेपाल के इतिहास का संशोधित संस्करण (छ) सुजानचरित्र, यदि पुस्तकों की खोज में उसकी कोई उत्तम प्रति मिली हो (ज) छत्रप्रकाश, नागरी प्रचारिणी ग्रन्थमाला में निकाला जाय (झ) कालबोध का संशोधित संस्करण।

(१४) पण्डित श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० का २१ जून का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बाबू चतुर्भुजसहाय वर्म्मा को सभा से जितनी छुट्टियाँ मिल सकती थीं उन सब छुट्टियों से लाभ उठा कर उन्होंने पहिले बिना कोई सूचना दिए हुए हिन्दी पुस्तकों के खोज के कार्य से एका एक अपने पद को त्याग कर दिया।

निश्चय हुआ कि बाबू चतुर्भुजसहाय का यह आचरण सर्वथा अनुचित है। उनका इस्तीफ़ा स्वीकार किया जाय ग्रैर उनके स्थान पर दूसरा उपयुक्त मनुष्य नियत कर लिया जाय।

(१५) मंत्री के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि सभा के क्लार्क पण्डित काशीप्रसाद तिवारी बहुधा अनुपस्थित रहा करते हैं ग्रैर इधर २ मास से वे अनुपस्थित हैं जिससे सभा के कार्यों में बहुत हानि होती है। अतः वे अपने पद से

च्युत किए जायँ और उनके स्थान पर बाबू पशुपतिनाथ नियुक्त किए जायँ।

(१६) बालाघाट के पंडा बैजनाथ जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि सभा मिस्टर जी० स्पिलर की ट्रेनिंग आफ़ दी चाइल्ड नामक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करे तो वे इसके लिये सभा को ६०) रु० की सहायता देंगे।

निश्चय हुआ कि इसके लिये श्रीयुत पंडा बैजनाथजी को धन्यवाद दिया जाय और इस पुस्तक के आधार पर हिन्दी भाषा में एक पुस्तक लिखवाई जाय। इसके लिये ३०) रु० का पुरस्कार स्वीकार किया जाय।

(१७) निश्चय हुआ कि जो लोग मनोरंजन पुस्तक-माला की सब पुस्तकों को न लेकर केवल इस की फुटकर पुस्तकें लिया चाहें उनसे प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) रु० लिया जाय।

(१८) बाबू शिवकुमार सिंह के ये प्रस्ताव उपस्थित किए गए कि (क) सभा की वार्षिक रिपोर्ट में उत्तम पुस्तकों का जो उल्लेख रहता है उसके लिए एक सबकमेटी बना दी जाय और पुस्तकों के सम्बन्ध में उसी कमेटी की सम्मति रिपोर्ट में प्रकाशित की जाय (ख) सभा के वार्षिक विवरण में सम्मिलित करने के लिये वकील और मुख्तार मेम्बरों तथा हिन्दीहितैषिणी सभाओं से नागरी प्रचार के विषय में रिपोर्ट मांगी जाय (ग) नागरी में काम करनेवाले आनरेरी मेजिस्ट्रेटों का उल्लेख भी सभा की रिपोर्ट में रहे (घ) सभा की प्रकाशित पुस्तकों का विज्ञापन नियमित रूप से नागरी प्रचारिणी पत्रिका तथा अन्य हिन्दी समाचार पत्रों में प्रकाशित किया जाय।

निश्चय हुआ कि (क) इसके लिये एक जुदी सबकमेटी के नियत किए जाने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती (ख) यह स्वीकार किया जाय (ग) सभा की सम्मति में इसकी आवश्यकता नहीं है (घ) पुस्तकों का विज्ञापन नागरीप्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित किया जाय और वह हिन्दी शब्दसागर के टाइटिलपृष्ठ पर भी छपा करे।

(१९) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

गौरीशंकरप्रसाद

मंत्री।

मनोरंजन पुस्तकमाला।

आदर्श जीवन।

(लेखक पं० रामचन्द्र शुक्ल।)

इस पुस्तक का उद्देश्य युवा पुरुषों के चित्त में अविचल रूप से उत्तम संस्कार जमाना है। यह अँगरेज़ी की प्रसिद्ध पुस्तक Plain Living and High Thinking के आधार पर लिखी गई है। इसमें वे साधन बहुत अच्छी तरह बतलाए गए हैं जिनके द्वारा मनुष्य परिवार और समाज अर्थात् घर के भीतर और बाहर सुख और शांति के साथ जीवन निर्वाह कर सकता है। मूल पुस्तक में जहाँ जहाँ दृष्टान्तरूप से यूरप के प्रसिद्ध प्रसिद्ध पुरुषों से सम्बन्ध रखनेवाली बातें आई हैं वहाँ यथासम्भव इसमें भारतीय इतिहास से ऐसे ऐसे चमत्कारपूर्ण दृष्टान्त दिए गए हैं जिनका प्रभाव देशवासियों के हृदय पर स्वभावतः बहुत अधिक पड़ेगा। इस प्रकार की पुस्तक की हिन्दी में बड़ी आवश्यकता थी। लोग ऐसी पुस्तक ढूँढ़ते थे और नहीं पाते थे। आत्मसंस्कार संबंधी यह पुस्तक हिन्दी में अपूर्व निकली। आत्मबल, आचरण, स्वाध्याय, स्वास्थ्यरक्षा आदि विषयों पर ६ प्रकरण बहुत ही चलती, चटकीली और ज़ोरदार भाषा में लिखे गए हैं जिन्हें पढ़ने से युवा पुरुषों के अन्तःकरण में वे शुभ संस्कार स्थापित हो सकते हैं जिनके बल से मनुष्य कठिनाइयों को कुछ न समझता हुआ प्रसन्नचित्त उन्नति की ओर बराबर बढ़ सकता है। यह पुस्तक प्रत्येक घर में विशेष कर प्रत्येक युवक के हाथ में होनी चाहिए। मूल्य फुटकर १); पुस्तकमाला के ग्राहकों से ॥।) ; डाकव्यय अलग।

आत्मोद्धार।

(लेखक बा० रामचन्द्र वर्म्मा।)

पुस्तकमाला की दूसरी पुस्तक है आत्मोद्धार। यह अमेरिका के प्रसिद्ध हबशी नेता मि० बुकर टी० वाशिंगटन का जीवनचरित है। वाशिंगटन ने बहुत ही दरिद्र घर में जन्म लेकर जितनी मानसिक और नैतिक उन्नति की है उसे देखकर बड़े बड़े यूरोपियन और अमेरिकन दंग रह गए हैं। मि० वाशिंगटन ने अमेरिका के टस्कज़ी नगर में ३३ वर्ष पहले एक छोटी सी झोपड़ी में जो विद्यालय स्थापित किया था, वह इस समय आदर्श और अच्छे अच्छे विश्वविद्यालयों से बढ़कर समझा जाता है। उनकी योग्यता और उनके विचारों की प्रशंसा अमेरिकन संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति तथा और बड़े बड़े प्रसिद्ध पुरुषों ने की है। इस पुस्तक के पढ़ने से यह बात मालूम हो जाती है कि एक साधारण मनुष्य भी अपने नैतिक बल और सदाचरण की सहायता से कहाँ तक उन्नति कर सकता है। पुस्तक आद्योपांत बहुत ही रोचक और शिक्षाप्रद है। इसमें अनेक ऐसी घटनाओं और सिद्धान्तों का वर्णन है जिनसे पाठकों को बहुत बड़ी शिक्षा मिलेगी। इसके अतिरिक्त इसके पढ़ने से अमेरिका की गत पचास वर्षों की तथा वर्त्तमान स्थिति का भी बहुत कुछ परिचय मिलता है। तात्पर्य्य यह कि पुस्तक अनेक ज्ञातव्य और मननीय विषयों से परिपूर्ण है। प्रत्येक विद्याप्रेमी को इसकी एक प्रति अवश्य अपने पास रखनी चाहिए। मूल्य १) पुस्तकमाला के ग्राहकों से ॥।) डाकव्यय अलग।

गुरु गोविंदसिंह।

(लेखक बा० वेणी प्रसाद।)

मनोरंजन पुस्तकमाला की तीसरी पुस्तक का नाम "गुरु गोविंदसिंह" है। ख़ालसा पंथ के अंतिम और दसवें गुरु गोविंदसिंह ने प्रसिद्ध कट्टर मुसलमान शासक औरंगजेब के विरुद्ध एक ऐसी बलवती धार्म्मिक शक्ति खड़ी कर दी थी जिसने आगे चलकर एक साम्राज्य की स्थापना की थी। उन्हीं गुरु गोविंदसिंह की यह सविस्तर जीवनी है। इस पुस्तक में यह बात भली भाँति

बतलाई गई है कि गुरु साहब ने किस प्रकार कठिन परिश्रम करके हिन्दू धर्म्म और राष्ट्र की रक्षा विदेशियों से करने के लिए अनेक बार धर्म्मयुद्ध किए थे और अन्त में अपना उद्देश्य बहुत से अंशों में सिद्ध भी कर लिया था। अपने धर्म्म, देश और राष्ट्र की सच्ची सेवा करने में मनुष्य को कैसी कैसी कठिनाइयाँ पड़ती हैं, उन कठिनाइयों को दूर करने के लिए कैसे साहस, पराक्रम, दृढ़ निश्चय, स्वार्थलाभ और अविश्रांत परिश्रम करने की आवश्यकता होती है और इन सब बातों का परिणाम कितना शुभ और कल्याणकारी होता है आदि आदि बातों का इस पुस्तक में बहुत ही मनोहर वर्णन हुआ है। गुरु महाराज ने अपने शिष्यों और अनुयायियों को जो उपदेश और शिक्षाएं दी थीं वे भी इस पुस्तक में सम्मिलित कर ली गई हैं। इसके अतिरिक्त, पुस्तक के पढ़ने से भारतवर्ष की ततकालीन अवस्था का भी बहुत कुछ पता चलता है। धर्म्म, देश, शिक्षा इतिहास आदि सभी के प्रेमियों को इस पुस्तक में अनेक काम की और अनेक अनुकरणीय योग्य बातें मिलेंगी। पुस्तक रोचक तथा सब लोगों के संग्रह करने योग्य है। पृष्ठ संख्या २४७ मूल्य १) पुस्तक-माला के ग्राहकों से ।॥-) डाक व्यय अलग।

आदर्श हिन्दू।

प्रथम भाग।

(लेखक पं० लज्जाराम शर्मा।)

मनोरंजन पुस्तकमाला की चौथी पुस्तक भी तैयार है। इसका नाम आदर्श हिन्दू है और यह एक बहुत रोचक और शिक्षाप्रद उपन्यास है। यह उपन्यास साधारण नहीं, वरन् उच्च कोटि का है और इसका विषय सामाजिक एवं धार्म्मिक है। एक साधारण सच्चे हिन्दू गृहस्थ की वास्तविक दशा और स्थिति कैसी होती है और वह किस प्रकार अपनी जीवन-यात्रा का निर्वाह करता है, इसके जानने के लिए एक मात्र यही पुस्तक बहुत कुछ यथेष्ट है। इस पुस्तक से अनेक धार्म्मिक और सामाजिक बातों का तो पूरा पूरा पता लगता ही है, साथ ही मनोहर और रोचक भ्रमण-वृत्तांत भी पढ़ने को मिलता है। इसमें एक ऐसे आदर्श-हिन्दू गृहस्थ का वर्णन है, जो अपने परिवार के लोगों को साथ लेकर तीर्थ-यात्रा करने के लिए निकला है। अतः पुस्तक में भारत के अनेक प्रसिद्ध-तीर्थों और वहाँ के मंदिरों, पंडों तथा आचार व्यवहार आदि का भी बहुत अच्छा वर्णन आ गया है। पुस्तक जितनी ही रोचक है उतनी ही शिक्षाप्रद भी है। जो लोग केवल उपन्यास के ही प्रेमी हों उनके लिए तो यह पुस्तक संग्रह करने योग्य है ही, साथ ही जो लोग उच्च कोटि के उपन्यासों के इच्छुक हों, उन्हें भी यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिए। यह पुस्तक प्रायः ३ भागों में समाप्त होगी। पहला भाग तैयार है और शेष भाग भी शीघ्र ही तैयार होंगे। मूल्य प्रति भाग १) पुस्तक-माला के ग्राहकों से ॥) डाक-व्यय अलग।

मिलने का पता—

मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-सीरीज़।

इस ग्रन्थमाला के लिए हिन्दी के नामी नामी विद्वानों की सम्मति से ग्रन्थ चुने जाते हैं और धुरन्धर लेखकों से वे लिखवाये जाते हैं। प्रत्येक ग्रन्थ की छपाई सफ़ाई काग़ज़ जिल्द आदि सभी बातें लासानी होती हैं। स्थायी ग्राहकों को सब ग्रन्थ पौनी क़ीमत पर दिये जाते हैं। ऐसे ग्राहकों को पहले डिपाजिट के तौर पर आठ आने भेज कर नाम लिखा लेना चाहिए। सिर्फ़ पाँच सौ ग्राहकों की जरूरत है। नीचे लिखे ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। सभी समाचारपत्रों ने इनकी प्रशंसा की है।

१ स्वाधीनता—पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी कृत २)
२ प्रतिभा—भावपूर्ण शिक्षाप्रद उपन्यास सादी जिल्द १)

३ फूलों का गुच्छा—सुन्दर गल्पों का संग्रह ।|=)
४ आंख की किरकिरी—साहित्यसम्राट् रवीन्द्रनाथ के प्रसिद्ध उपन्यास का अनुवाद सादी जि० १॥)
५ चौबे का चिट्ठा—बंकिम बाबू के कमलाकान्तेर दफ़्तर का हिन्दी अनुवाद ॥≡)
६ मितव्ययिता—डा० सेमवल स्माइल्स के 'थ्रिफ्ट' का सुन्दर हिन्दी अनुवाद ।||=)

और कई ग्रन्थ तैयार हो रहे हैं जो शीघ्र ही प्रकाशित होंगे । डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुर का 'स्वदेश' नामक ग्रन्थ शीघ्र निकल जायगा । नीचे लिखे ग्रन्थ भी हमारे यहाँ से मिल सकते हैंः—

१ भारत भारती-कवि मैथिलीशरण जी कृत—१)
२ जयद्रथबध काव्य „ „ ॥=)
३ पद्यप्रबन्ध (कवितासंग्रह) „ „ ॥=)
४ रंग में भंग (खण्ड काव्य) „ „ ।-)
५ मौर्य विजय „ „ „ ।-)
६ समाज-डा० रवीन्द्रनाथ कृत „ ।=)
७ ठोक पीट कर वैद्यराज (प्रहसन) „ ।-)
८ सूर्य चक्रवेध (योग) „ „ १।)
९ विद्यार्थी जीवन का उद्देश्य „ „ ।)
१० गृहिणी भूषण (स्त्री शिक्षा) „ „ ।=)

मैनेजर—हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय हीराबाग़, पो० गिरगाँव—बम्बई ।